जिनभाषित

फरवरी 2002

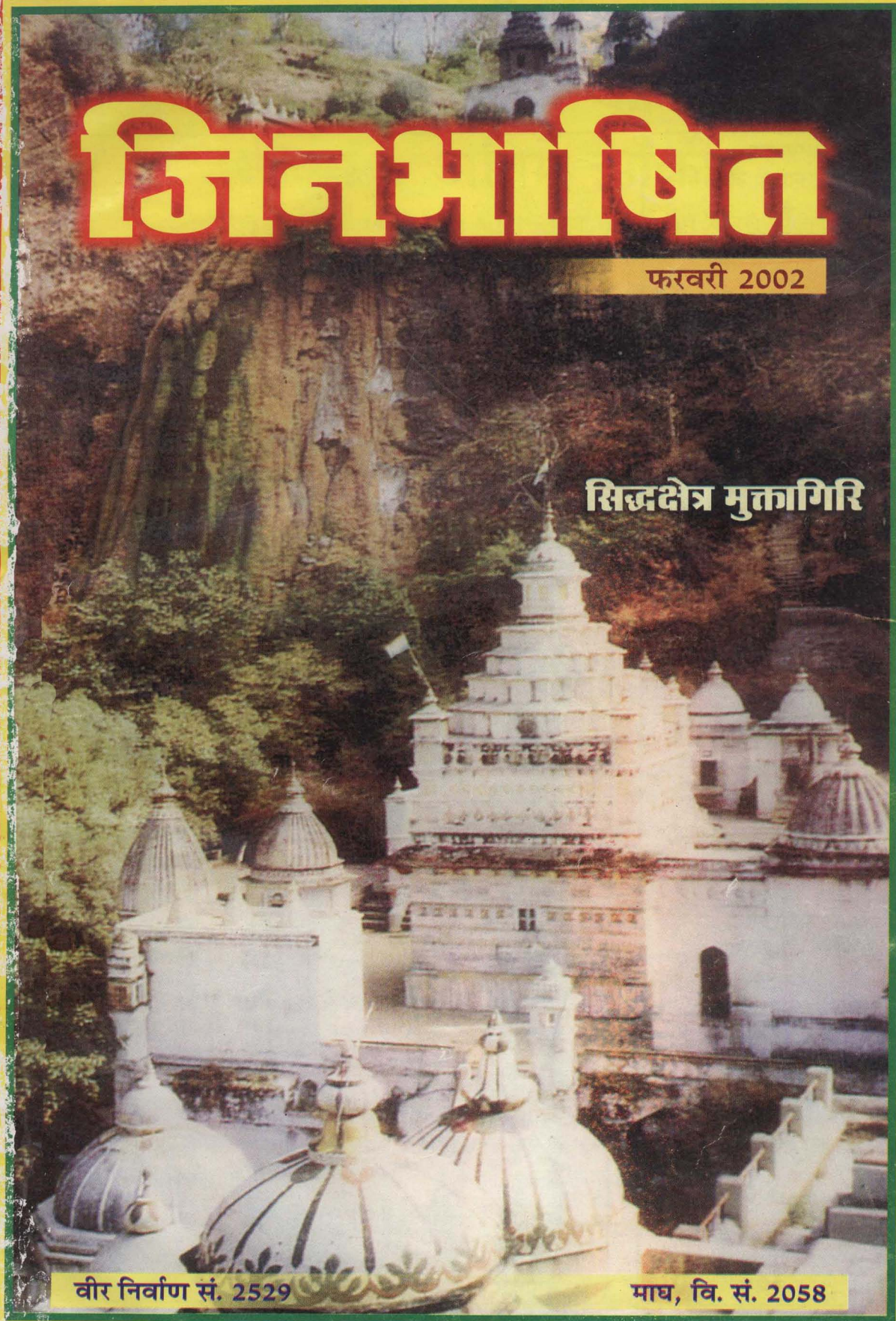

वीर निर्वाण सं. 2529 माघ, वि. सं. 2058

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

रजि. नं. UP/HIN/29933/24/1/2001-TC

जिनभाषित

फरवरी 2002

मासिक

वर्ष 1, अङ्क 1

सम्पादक
प्रो. रतनचन्द्र जैन

◆

कार्यालय
137, आराधना नगर,
भोपाल-462003 म.प्र.
फोन 0755-776666

◆

सहयोगी सम्पादक
पं. मूलचन्द लुहाड़िया
पं. रतनलाल बैनाडा
डॉ. शीतलचन्द्र जैन
डॉ. श्रेयांस कुमार जैन
प्रो. वृषभ प्रसाद जैन
डॉ. सुरेन्द्र जैन 'भारती'

◆

शिरोमणि संरक्षक
श्री रतनलाल कँवरीलाल पाटनी
(मे. आर.के. मार्बल्स लि.)
किशनगढ़ (राज.)
श्री गणेश राणा, जयपुर

◆

द्रव्य-औदार्य
श्री अशोक पाटनी
(मे. आर.के. मार्बल्स लि.)
किशनगढ़ (राज.)

◆

प्रकाशक
सर्वोदय जैन विद्यापीठ
1/205, प्रोफेसर्स कॉलोनी,
आगरा-282002 (उ.प्र.)
फोन : 0562-351428,352278

◆

सदस्यता शुल्क

शिरोमणि संरक्षक	5,00,000 रु.
परम संरक्षक	51,000 रु.
संरक्षक	5,000 रु.
आजीवन	500 रु.
वार्षिक	100 रु.
एक प्रति	10 रु.

सदस्यता शुल्क प्रकाशक को भेजें।

अन्तस्तत्त्व

		पृष्ठ
◆ **विशेष समाचार :**		
● आर्यिका विशुद्धमति जी की समाधि साधना		1
● श्रद्धांजलि		1
● समाधियों का मौसम		3
● जतारा में अपूर्व धर्मप्रभावना		4
◆ **आपके पत्र : धन्यवाद**		5
◆ **सम्पादकीय** : नई पीढ़ी धर्म से विमुख क्यों?		8
◆ **प्रवचन :**		
● आत्मा से परमात्मा तक पहुँचाने वाले संस्कार	: आचार्य श्री विद्यासागर	11
● वीतरागदृष्टि से ही वैराग्य का जन्म	: आचार्य श्री विद्यासागर	12
◆ **लेख**		
● 'जैन तत्त्वविद्या' के प्रणेता मुनि श्री प्रमाणसागर जी	: प्राचार्य निहालचन्द जैन	14
● कर्त्तव्यनिष्ठा के जागरूक प्रहरी डॉ. पन्नालाल जी साहित्याचार्य	: ब्र. त्रिलोक जैन	16
● ब्रह्मचारिणी पण्डिता चन्दाबाई जी	: डॉ. आराधना जैन	19
● अहिंसा की वैज्ञानिकता	: अजित जैन जलज	21
◆ **संस्मरण** : छात्रावास में वर्णी जी	: डॉ. श्रीमती रमा जैन	13
◆ **जिज्ञासा-समाधान**	: पं. रतनलाल बैनाड़ा	24
◆ **व्यंग्य : नेता जी की टाँग**	: शिखरचन्द्र जैन	26
◆ **दर्शनपाठ**	: अर्थकर्त्ता ब्र. महेश	29
◆ **बालवार्ता** : मनुष्यता की खोज	: मुनिश्री अजित सागर	31
◆ **कविताएँ**		
● राजुल-गीत	: श्रीपाल जैन 'दिवा'	13
● महावीर	: विनोद कुमार 'नयन'	23
● एक अहसास था	: मुनि श्री क्षमासागर	आवरण 3
● प्रतियोगिता	: मुनि श्री क्षमासागर	आवरण 3
● मंदिर में मुनियों की वन्दना करते देख	: सरोजकुमार	आवरण 3
◆ **समाचार**		15,18,25,28,30,32

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विशेष समाचार

आर्यिका विशुद्धमति जी की समाधि-साधना : अंतिम झाँकी

विदुषी आर्यिका पूज्य विशुद्धमति माताजी ने 14 अगस्त 1964 को मोक्ष सप्तमी के दिन परम पूज्य आचार्य श्री शिवसागरजी से आर्यिका दीक्षा प्राप्त की थी। फिर पच्चीस वर्ष की सतत तपस्या के माध्यम से उन्होंने अपनी साधना का भव्य-भवन बनाया। उसके उपरान्त बारह वर्ष की सल्लेखना लेकर, कठोर साधना करते हुए उन्होंने अपने उस पुण्य-भवन पर उत्तुंग शिखर का निर्माण किया जो अपने आप में एक अनोखा उदाहरण था। इन बारह वर्षों में क्रमशः एक-एक वस्तु त्यागते हुए सन् 1998 के चातुर्मास से एक दिन के अंतर से और सन् 2000 के चातुर्मास से दो दिन के अंतर से आहार लेकर उन्होंने उत्कृष्ट समाधि-साधना का अप्रतिम उदाहरण प्रस्तुत किया। अंत में केवल जल ही उनकी इस पर्याय का आधार था जिसे 16 जनवरी 2002 को जीवन-पर्यन्त के लिये त्याग दिया और अंतिम छह दिवस माताजी ने निर्जल व्यतीत किये।

माताजी की समाधि-साधना में सहयोग देने के लिये पूज्य आचार्य श्री वर्द्धमानसागरजी ने यह चातुर्मास धरियावद में ही स्थापित किया था। अंत में तो पूरा संघ उसी साधना-स्थली नंदनवन में पधार गया था। परमपूज्य आचार्य वीरसागरजी की वरिष्ठ शिष्या आर्यिकारत्न सुपार्श्वमति माताजी चार सप्ताह में साढ़े चार सौ किलोमीटर की यात्रा करके सीकर से नंदनवन आ गई थीं। अन्य संघों से मुनि श्री हेमंतसागरजी, वैराग्यसागर जी तथा आचार्य अभिनंदनसागरजी के संघ के कुछ सदस्यों का इस अवसर पर नंदनवन में पदार्पण हुआ।

समाधिकाल में माताजी निरंतर सावधान रहीं और प्रायः मंगल पाठ सुनने में दत्त-चित्त रहीं। पूज्य आचार्य वर्द्धमानसागरजी ने जल त्याग कराकर माताजी को अंतिम औत्तमार्थिक प्रतिक्रमण सुनाया। उनके साथ मुनि श्री पुण्यसागरजी लगातार माताजी को स्तोत्र पाठ आदि सुनाते रहते थे। विशुद्धमतिजी की प्रिय शिष्या आर्यिका प्रशान्तमति माताजी अनेक वर्षों से छाया की तरह उनकी सेवा में संलग्न थीं। अंतिम काल में सुपार्श्वमति माताजी का सम्बोधन और शीतलमती तथा वर्धितमती माताजी सहित अन्य आर्यिकाओं द्वारा तथा संघ के ब्रह्मचारी भाई-बहिनों द्वारा दिन-रात संलग्न रहकर की गई वैयावृत्ति भी अनुकरणीय और सराहनीय थी।

कुल मिलाकर विशुद्धमति माताजी की द्वादशवर्षीय सल्लेखना और अंत में जल त्याग के बाद छह दिन की कठोर साधना अत्यंत प्रभावक और प्रेरणादायक रही। प्रतिदिन चार-पाँच हजार जैन-अजैन जनता उनके दर्शनार्थ आती रही। 73 वर्ष की आयु में, 37 वर्ष का निर्दोष संयमी जीवन बिताकर आर्यिका माताजी ने 22 जनवरी को प्रातःकाल साढ़े चार बजे देह-त्याग किया। उसी दिन पूर्वाह्ण में लगभग दस हजार लोगों के जयकारे के बीच चन्दन-कपूर और हजारों नारियलों से सज्जित चिता पर विराजमान करके महासभा अध्यक्ष श्री निर्मलकुमार सेठी के साथ माताजी की पूर्व अवस्था के दोनों भ्राताओं श्री नीरज जैन और निर्मल जैन तथा नन्दनवन के स्वप्न-शिल्पी प्रतिष्ठाचार्य पं. हसमुखजी ने उनका नश्वर शरीर अग्नि को समर्पित कर दिया।

आचार्य वर्द्धमानसागरजी के संघ में इस चातुर्मास में चार समाधि-मरण हुए हैं। वयोवृद्ध आर्यिका विपुलमति माताजी ने 12 दिसम्बर को देह त्याग किया। आर्यिका पार्श्वमति माताजी 28 दिसम्बर को स्वर्ग सिधारीं और 21 जनवरी की रात्रि में इसी संघ के मुनि पूज्य श्री चारित्रसागरजी ने सनावद में समाधि-मरण प्राप्त किया। पूज्य विशुद्धमति माताजी ने 22 जनवरी को प्रातः ब्राह्म मुहूर्त में अपनी पर्याय का पर्यवसान किया।

निर्मल जैन

श्रद्धांजलि

सांगानेर

पूज्य 105 आर्यिका विशुद्धमति माताजी के 22 जनवरी 2002 को सल्लेखनापूर्वक देहोत्सर्ग करने के उपलक्ष्य में श्री दि. जैन श्रमण संस्कृति संस्थान सांगानेर में एक शोकसभा का आयोजन किया गया। सभा का शुभारम्भ भैया अजेश जी ने मंगलाचरण के द्वारा किया। पूज्य माताजी के प्रारम्भिक जीवनपरिचय को बताते हुए ब्र. महेश भैया जी ने कहा कि 12 अप्रैल 1926 को जन्मी सुमित्रा बाई ने अपने आदर्श जीवन के द्वारा न केवल रीठी, सतना और सागर में अपनी विद्वत्ता के माध्यम से छाप छोड़ी, अपितु सर्वोत्कृष्ट आर्यिका के रूप में सम्पूर्ण भारतवर्ष में अपना नाम रोशन किया। सल्लेखना के अवसर पर नंदनवन में साक्षात् समाधि का दृश्य देखने वाले संस्थान के संस्कृत अध्यापक युवा विद्वान पं. राकेश जी 'शास्त्री' ने अपने संस्मरण सुनाते हुए कहा कि पूज्य माताजी ने समतापूर्वक समाधि कर अपनी 12 वर्ष की तपस्या को सफल बनाया। 25 वर्षीय महाव्रती जीवन जीकर उन्होंने सल्लेखनामंदिर की नींव भरी तथा 12 वर्षीय सल्लेखना की अवधि में उन्होंने सल्लेखनामंदिर का निर्माण किया तथा 16 जनवरी 2002 को चारों प्रकार के आहार का त्याग कर उस मंदिर पर कलशारोहण किया तथा 22 जनवरी 2002 को ब्रह्म मुहूर्त में 4.30 बजे निर्यापक आचार्य वर्द्धमानसागर जी एवं आर्यिका गणनी 105 श्री सुपार्श्वमति माताजी के सत् संबोधनों के द्वारा ओम् का उच्चारण करते हुए समाधिपूर्वक मरण करके ध्वजारोहण किया। पूज्य माताजी का वियोग सम्पूर्ण जैन समाज के लिये एक अपूरणीय क्षति है। सभा के अन्त में 5 मिनट का मौन धारण कर सभी छात्रों ने पूज्य माताजी के प्रति सद्भावना भाते हुए श्रद्धांजलि अर्पित की।

भरत कुमार बाहुबलि कुमार 'शास्त्री'
श्री दि. जैन श्रमण संस्कृति संस्थान, सांगानेर, जयपुर

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जबलपुर

दिनांक 22.01.2002 को प्रातः 4.30 बजे विदुषी आर्यिका रत्न पूज्य विशुद्धमति माता जी के 'उदयपुर राज.' में समाधिस्थ होने का समाचार सुन कर सर्वत्र शोक की लहर छा गई। आज रात्रि में श्री वर्णी दिगम्बर जैन गुरुकुल, पिसनहारी मढ़िया, जबलपुर में एक विनयांजलि सभा का आयोजन किया गया, जिसमें अनेक विद्वज्जनों ने भाग लिया। श्री वर्णी दिगम्बर जैन गुरुकुल के अधिष्ठाता ब्र. जिनेश जी ने कहा कि आर्यिका विशुद्धमति माता जी, बहिन सुमित्राबाई जी के रूप में सागर स्थित महिलाश्रम में अध्ययन किया करती थीं। सुप्रसिद्ध महामनीषी स्व. डॉ. श्री पन्नालालजी साहित्याचार्य 'सागर' उनके शिक्षागुरु थे। अध्ययन के उपरान्त सन् 1964 में तीर्थराज पपौराजी में आपने आर्यिका दीक्षा ग्रहण की। आपकी साधना अद्वितीय थी, जिसके बल पर आपने अपने लक्ष्य को साकार किया एवं उत्तम समाधिमरण को प्राप्त किया। गुरुकुल के संचालक ब्र. प्रदीप शास्त्री 'पीयूष' ने कहा कि जैन धर्म शरीर के आश्रित नहीं है, भावों की प्रधानता है। माता जी ने श्रमण संस्कृति में नया इतिहास रचा है। आज से 12 वर्ष पूर्व आपने सल्लेखना व्रत लिया और क्रमशः समाधि के शिखर पर बढ़ते हुए उस पर विजय प्राप्त की। ब्र. त्रिलोक जी ने कहा कि माताजी ने बाल्याकाल से ही विद्याभ्यास एवं वैराग्य का मार्ग अपनाया। आपके जीवन में दृढ़ता बहुत थी, जिसके रहते वे अपनी जीवन साधना में सफल हुईं। ब्र. पवन जी 'सिद्धांतरत्न' ने कहा कि पूज्य माताजी अद्भुत बुद्धि की धनी थीं, आपका ज्ञान सूक्ष्म था, जिसके फलस्वरूप आपने त्रिलोकसार, त्रिलोयपण्णति एवं मरणकंडिका जैसे आगम ग्रंथों की टीकाएँ कीं। वत्थुविज्जा, श्रमणचर्या, समाधि दीपक, 'ऐसे ये चारित्र चक्रवर्ती' आदि आपकी अन्य महत्त्वपूर्ण कृतियाँ हैं, जो समाज का सदैव मार्गदर्शन करती रहेंगी। श्री राकेश जैन 'एम. टेक' ने कहा कि माता जी ने शारीरिक सुविधाओं को त्याग कर मन पर विजय प्राप्त की। समाधि के मार्ग पर चलने का संकल्प 12 वर्ष पूर्व लेकर अद्भुत मिशाल कायम की। उस का सम्पूर्ण निष्ठापूर्वक पालन करते हुए जैनागम के अनुसार सम्यक् समाधि को प्राप्त किया। ब्र. अनिल जी ने कहा कि जीवन और मृत्यु अटल सत्य हैं। मृत्यु को जीतने का जैन धर्म में समाधि के रूप में विधान किया गया है। पूज्य माता जी ने संकल्पपूर्वक समाधि का लाभ प्राप्त किया।

पूज्य माता जी के समाधिमरण से जैन समाज में एक करुणा एवं वात्सल्य की मूर्ति तथा विलक्षण बुद्धिकौशल वाली आर्यिका रत्न का अभाव हो गया है, जिसकी पूर्ति अब असंभव-सी लगती है। विनयांजलि सभा में अन्य वक्ताओं के रूप में ब्र. कमलजी, ब्र. नरेशजी, ब्र. महेशजी, ब्र. विवेकजी, प्राचार्य श्री सी.एल. जैन, पं. लखमीचंद्र जैन एवं समस्त गुरुकुल परिवार उपस्थित था। सभा का संचालन मंत्री श्री कमल कुमार जी 'दानी' ने किया।

ब्र. त्रिलोक जैन

मदनगंज-किशनगढ़

आज दिनांक 22.1.2002 सायं 7.30 बजे श्री चन्द्रप्रभु दिगम्बर जैन मंदिर जी में परम पूज्य मुनि श्री चारित्र सागर जी महाराज एवं परम पूजनीया श्री विशुद्धमति माताजी के दिवंगत हो जाने पर एक विनयांजलि सभा का आयोजन श्री दिगम्बर जैन समाज द्वारा किया गया, जिसमें दोनों साधु महाराज एवं आर्यिका माता के प्रति उनके उत्तम एवं संयमित जीवन को दर्शाते हुए उनकी जीवन-मरण की शृंखला शीघ्र समाप्त होकर शाश्वत पद प्राप्त होने की मंगल कामना करते हुए भावभीनी विनयांजलि अर्पित की गई।

उक्त सभा में श्री बोदूलाल जी गंगवाल की अध्यक्षता में क्रमशः श्री शांति कुमार गोधा, दीपचन्द चौधरी, पारसमल बाकलीवाल, निर्मल कुमार पाटोदी, डॉ. ओमप्रकाश जैन, श्री मूलचन्द झाँझरी, भागचन्द चौधरी एवं श्रीमती आशा जैन ने अपनी एवं समाज की तरफ से भाव-भीनी विनयांजलि अर्पित की और एक शोक प्रस्ताव पास कर णमोकार मंत्र के साथ सभा का विसर्जन किया गया।

निर्मल कुमार पाटोदी
कटला, मदनगंज-किशनगढ़, पिन-305801 (राज.)

छपारा में पंचकल्याणक गजरथ

21 जनवरी 2002 का दिन सिवनी जिले की छपारा नगरी ही नहीं, वरन् सम्पूर्ण महाकौशल, विंध्य व बुंदेलखंड के लिये परम सौभाग्य का दिन रहा है। गत एक सप्ताह से चल रहे पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव की गजरथ की फेरी लगभग एक से डेढ़ लाख श्रद्धालुओं की उपस्थिति में निर्विघ्न संपन्न हुई। परम पूज्य आचार्य गुरुवर विद्यासागर जी महाराज एवं दृढ़मति माता जी के पावन आशीर्वाद से बिना किसी अप्रिय घटना के कार्यक्रम सम्पन्न हुआ।

गजरथ महोत्सव समापन पर आर्यिका दृढ़मति माता ने आचार्य विद्यासागर को महावीर की उपमा से विभूषित करते हुए कहा कि जैसे चंदनबाला के घर महावीर के आने से अतिशय हुए थे, ऐसे ही अतिशय आचार्य श्री के छपारा पधारने पर हुए। गुरुवर आचार्य विद्यासागर महाराज ने उपस्थित धर्मप्रेमी बंधुओं को संबोधित करते हुए कहा कि जीवन में पल-पल कर्मों के द्वारा परीक्षा होती रहती है। हमें हर पल आत्म-परीक्षण हेतु तैयार रहना चाहिये। जैन समाज की अपेक्षा इस क्षेत्र की जनता का भी महान पुण्य का उदय है कि पंचकल्याणक निर्विघ्न संपन्न हो गया। अन्य जगह की अपेक्षा महाकौशल व बुंदेलखंड की देन है कि यहाँ के गजरथ हमेशा सफल होते हैं।

आचार्य श्री ने कहा कि जैसी भावना हो फल वैसा ही मीठा होता है। पंचकल्याणक में जो धन बच जाता है, उसका लोभ न करके अन्य स्थानों के तीर्थ-उद्धार में लगा देना भी अनुकरणीय उदाहरण है। जो अहिंसा धर्म की उपासना करते हैं, देवता उनके आस-पास निवास करते हैं। यह सब अहिंसा का प्रभाव है। छपारा आते ही अचानक मौसम की ठंडक कम हो गई, यह सब आपकी भावना का प्रभाव है। गजरथ महोत्सव के समापन के दो दिन पूर्व से अचानक मौसम ने करवट बदली, आसमान बादलों से घिरे रहे, सारा क्षेत्र चिंता से व्याकुल था कि कहीं पानी कहर न बरपा दे। लेकिन धर्म का प्रभाव है कि सब निर्विघ्न सम्पन्न हो गया। महाराज ने अपने उद्बोधन में पहले ही कह दिया था कि बादल छायेंगे, दल-दल नहीं होगी, बरसने से पहले पूछना होगा। जिला पुलिस प्रशासन एवं जिला प्रशासन की चुस्त-दुरुस्त व्यवस्था से लाखों की संख्या में उपस्थित धर्मप्रेमी श्रावकगण शांतिपूर्वक महोत्सव का आनंद लेते रहे।

अमित पड़रिया

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

समाधियों का मौसम

आचार्य समन्तभद्र स्वामी ने रत्नकरण्डकश्रावकाचार ग्रंथ में कहा है कि धर्मरूपी अमृत का पान करने वाला निरतिचार सल्लेखनाधारी जीव सब दुखों से रहित सुख के समुद्र स्वरूप मोक्ष को प्राप्त करता है या बहुत समय में समाप्त होने वाली अहमिन्द्र आदि की सुख परंपरा का अनुभव करता है।

निःश्रेयसमभ्युदयं निस्तीरं दुस्तरं सुखाम्बुनिधिम्।
निःपिबति पीतधर्मा सर्वेदुंःखैरनालीढः।।130।।

आचार्य देवसेन स्वामी ने आराधनासार में लिखा है कि विधि पूर्वक सल्लेखना धारण करने वाला सात-आठ भव में नियम से मोक्ष को प्राप्त होता है।

क्षपक की वैयावृत्ति करने को और उनके दर्शन को भी आचार्यों ने पुण्य बंध का कारण कहा है। हमारे पूर्वजों को तो शायद ही कभी ऐसा उत्कृष्ट समाधिमरण देखने को मिलता रहा होगा, परंतु हम ऐसे भाग्यशाली हैं कि जगह-जगह समाधिमरण देखकर अपने मरण के लिये भी प्रेरणा ले सकते हैं।

अभी 28 नवम्बर 2001 से 22 जनवरी 2002 तक का समय तो मानो समाधियों का मौसम ही था। इन 56 दिनों में दो मुनिराजों, पाँच आर्यिका माताओं ने समाधिमरण के साथ अपनी पर्याय का समापन किया। साथ ही इसी अवधि में तीन ऐसी धर्मनिष्ठ ब्र. बहिनों ने भी समाधिमरण किया, जिन्हें अंत समय में पिच्छिका प्रदान कर दी गई थी।

उक्त अवधि के पूर्व 27 अगस्त 2001 को सीकर में पूज्य आर्यिका विद्यामती जी की समाधि हो चुकी थी। आप गणिनीआर्यिका सुपार्श्वमतीजी के संघ की थीं और उन्हीं के साथ सीकर में चातुर्मास कर रही थीं। आपने 1.11.1960 को पूज्य आचार्य शिवसागर जी महाराज से आर्यिका दीक्षा ली थी। आपने अस्वस्थ होने पर क्रमशः सभी प्रकार के आहार का त्याग करते हुए यम सल्लेखना ली थी।

28 नवम्बर 2001 को नरवाली (राजस्थान) में पूज्य आचार्य अभिनंदनसागर जी के संघस्थ मुनिश्री अमेयसागर जी की समाधि हुई। सनावद में जन्मे श्री अमेयसागर जी ने सन् 1997 में कचनेर में आचार्य रयणसागर जी से दीक्षा प्राप्त की थी। 29 नवम्बर 2001 को खिमलासा (सागर) में पूज्य आचार्य विद्यासागर जी से दीक्षित विदुषी आर्यिका जिनमती जी ने समाधिमरण पूर्वक अपनी पर्याय पूर्ण की। आपने 10 फरवरी 1987 को सिद्धक्षेत्र नैनागिरि में पंचकल्याणक के अवसर पर आचार्यश्री से आर्यिका दीक्षा प्राप्त की थी। आपका जन्म 8.10.63 को शाहगढ़ में हुआ था।

11 दिसम्बर 2001 को भोपाल में आचार्य विद्यासागर जी की ही शिष्या पूज्य आर्यिका एकत्वमति जी ने सल्लेखनापूर्वक अपनी देह विसर्जित की। 15 जनवरी 1952 को रायसेन में जन्मी तथा 25 जनवरी 1993 को नन्दीश्वरद्वीप मढ़ियाजी जबलपुर के पंचकल्याणक अवसर पर आचार्यश्री से दीक्षा लेने वाली आर्यिका एकत्वमतीजी अस्वस्थता के बाद भी अपने संयम की साधना में अंत तक जागरूक रहीं।

12 दिसम्बर 2001 को धरियावद (राजस्थान) में पूज्य आर्यिका विपुलमतीजी ने पूज्य आचार्य वर्धमानसागर जी के संघसान्निध्य में जागरूक रहते हुए शांतिपूर्वक समाधिमरण किया। गृहस्थ अवस्था में पूज्य आचार्य भरतसागर जी (धार) की माँ विपुलमतीजी ने इस चातुर्मास के पूर्व ही आचार्य वर्धमानसागर जी से समाधि की याचना की थी। आचार्य महाराज ने उन्हें दो वर्ष की सल्लेखना का व्रत दिया था। वे तभी से एक दिन के अंतर से आहार के लिये उठती थीं और आहार में केवल मुनक्का पानी ही लेती थीं। आपने भगवान महावीर स्वामी के पच्चीससौवें निर्वाणोत्सव के अवसर पर दिल्ली में पूज्य आचार्य धर्मसागर जी से आर्यिका दीक्षा प्राप्त की थी। उपवास और जाप आपकी साधना के प्रमुख अंग थे।

28 दिसम्बर 2001 को धरियावद में ही आचार्य वर्धमानसागर जी के संघ सान्निध्य में एक और समाधि हुई पूज्य आर्यिका सुपार्श्वमतीजी की, जो आचार्य विमलसागर जी के संघ की थीं और इन्होंने भी इस चातुर्मास के पूर्व ही आचार्य वर्धमानसागर जी के सान्निध्य में आकर समर्पणपूर्वक उन्हें निर्यापकाचार्य बनाया था। सुपार्श्वमती जी ने 26 वर्ष पूर्व आचार्य पार्श्वसागर जी से दीक्षा ली थी, आपने बारह वर्ष की उत्कृष्ट सल्लेखना का व्रत लिया हुआ था और उसका अंतिम वर्ष चल रहा था। माताजी को तीर्थ वन्दना में बहुत रुचि थी। आपने श्री सम्मेदशिखरजी की 148 वन्दनाएँ की थीं। गिरनारजी आदि क्षेत्रों की भी कई वन्दनाएँ की थीं। उपवास भी बहुत करती थीं। आप चातुर्मास में आहार में केवल सेवफल और पानी ले रही थीं।

21 जनवरी 2002 को सनावद में पूज्य आचार्य वर्धमान-सागरजी के शिष्य मुनि श्री चारित्रसागर जी ने समाधिमरण पूर्वक स्वर्गारोहण किया। स्वाध्यायप्रिय चारित्रसागरजी महाराज सरलहृदय और निष्ठावान साधक थे। गृहस्थ अवस्था में पूज्य वर्धमानसागरजी के चाचा रहे चारित्रसागर जी ने सन् 1993 में गोमटेश्वर बाहुबली स्वामी के बारह वर्षीय मस्तकाभिषेक महोत्सव के अवसर पर श्रवणबेलगोला में पूज्य आचार्य वर्धमानसागर जी से मुनि दीक्षा ग्रहण की थी।

22 जनवरी 2002 को प्रातः नन्दनवन (धरियावद) में विदुषी आर्यिका पूज्य विशुद्धमति माताजी ने अपनी बारहवर्षीय सल्लेखना की अवधि पूरी करके पूज्य आचार्य वर्धमानसागर जी महाराज के संघ एवं गणिनी आर्यिका सुपार्श्वमतीजी के संघ-सान्निध्य में अपनी कठोर संयमसाधना के भव्य भवन पर समाधि रूपी उत्तुंग शिखर का निर्माण किया। माताजी ने 14 अगस्त 1964 को मोक्षसप्तमी के दिन अतिशय क्षेत्र पपौराजी में पूज्य आचार्य शिवसागर जी से आर्यिका दीक्षा ग्रहण की थी। जिनवाणी की अपूर्व सेवा करने वाली, तिलोय पण्णत्ती, त्रिलोकसार जैसे ग्रंथों की टीकाकर्त्री माताजी ने 16 जनवरी 1990 को पूरी तरह स्वस्थ अवस्था में पूज्य आचार्य अजितसागर जी महाराज से बारह वर्ष की सल्लेखना का व्रत ले लिया था। आचार्य अजितसागर जी की समाधि के बाद उस परंपरा के आचार्य पूज्य

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आचार्य वर्धमानसागर जी को अपना निर्यापकाचार्य बनाया था।

पूज्य माताजी अपनी साधना को क्रमशः बढ़ाते हुए सन् 1998 से एक दिन के अंतर से और सन् 2000 के चातुर्मास से दो दिन के अंतर से आहार को उठती थीं। अंतिम महिने में तो मात्र जल ही उनकी पर्याय का आधार रहा, जिसे 16 जनवरी 2002 को सल्लेखना अवधि पूर्ण होते ही उन्होंने पूरी तरह त्याग दिया था। जल त्याग के बाद छह दिन की उनकी कठोर साधना अत्यंत प्रभावक और प्रेरणादायक रही। नन्दनवन के एकांत परिसर में प्रतिदिन चार-पाँच हजार श्रद्धालु श्रावक उनके दर्शनार्थ आते थे। अग्निसंस्कार के समय तो दर्शनार्थियों की संख्या लगभग दस हजार थी। तैंतीस पीछीधारी माताजी की समाधि के समय नन्दनवन में विराजते थे।

धरियावद नन्दनवन की तीन समाधियाँ अत्यंत निकट से देखने का अवसर मुझे मिला। तीनों आर्यिका माताओं को पूज्य आचार्य वर्धमानसागर जी एवं उनके संघस्थ मुनिराजों, आर्यिका माताओं और ब्र. भाई बहिनों ने अत्यंत वात्सल्यपूर्वक संबोधन और वैयावृत्ति के द्वारा जिस प्रकार सम्हाला, वह देखने जैसा था। पूज्य आचार्य महाराज की कृपा से तीनों माताओं के अंत समय में मुझे भी उनके चरणों में बैठने का अवसर मिला, यह मेरा सौभाग्य था। पूज्य विशुद्धमति माताजी के प्रति वरिष्ठ आर्यिका गणिनी सुपार्श्वमती माताजी का वात्सल्य भी अप्रतिम था।

31 दिसम्बर 2001 ऐसी पुण्यतिथि थी कि उस दिन तीन धर्मनिष्ठ ब्र. माताओं ने समाधिमरण द्वारा देह त्यागकर अपना जीवन सार्थक कर लिया। गाजियाबाद में पूज्य उपाध्याय ज्ञानसागर जी महाराज के सान्निध्य में ब्र. सुशीलाबाई की समाधि हुई। बिजनौर में जन्मी सुशीलाजी ने सन् 1934 में क्षुल्लक मनोहरलालजी वर्णी से आजन्म ब्रह्मचर्यव्रत लेकर अपना व्रती जीवन प्रारंभ किया था। 70 वर्ष तक साधना करते हुए आर्यिका दृढ़मतीजी से हस्तिनापुर में अष्टम प्रतिमा के व्रत लिये और सन् 1989 में आचार्य सुमतिसागर जी से बारह वर्ष का सल्लेखना व्रत ले लिया। 1993 में अन्न का त्याग करके उन्होंने अपनी साधना बढ़ाई और अंत समय में उपाध्याय ज्ञानसागर जी के चरणों में पहुँच गई। उपाध्यायश्री ने अंत समय में पीछी प्रदान करके उनका नाम समाधिमति माताजी रख दिया था।

31 दिसम्बर 2001 को ही बाड़ी (रायसेन) में ब्र. त्रिलोकबाईजी ने पूज्य आर्यिका अकंपमतीजी के संघसान्निध्य में समाधिमरण किया। आर्यिका अकंपमतीजी ने आचार्य विद्यासागर जी से आशीर्वाद लेकर अंत समय में ब्र. त्रिलोकबाई को पीछी प्रदान करके पुण्यश्री माताजी बना दिया था।

उसी तारीख में इंदौर में श्रीमती चम्पादेवी ने भी समाधिमरण के साथ अपनी देह विसर्जित की। उन्हें अंत समय में पूज्य आचार्य सीमंधरसागरजी का चरण सान्निध्य और संबोधन मिला। ब्र. राजेशजी इन्दौर और विशालजी गंजबासौदा भी सम्बोधन में सहायक रहे। चम्पादेवी 90 वर्ष की धर्मनिष्ठ महिला थीं। उन्होंने जीवन में अनेक प्रकार के व्रतों की आराधना की तथा सिद्ध क्षेत्रों, अतिशय क्षेत्रों की अनेक वन्दनाएँ कीं।

समाधियों का यह मौसम मुझे भी समाधिमरण की प्रेरणा प्रदान करके मेरे आत्मकल्याण का पथ प्रकाशित करे, यही कामना है।

निर्मल जैन
सुषमा प्रेस, सतना

जतारा में अपूर्व धर्मप्रभावना

जतारा (टीकमगढ़ म.प्र.) सन्त शिरोमणि, प्रातः स्मरणीय परम पूज्य 108 आचार्य श्री विद्यासगर जी महाराज के मंत्र मुग्ध वाणी के धनी, परम प्रभावक शिष्य परम पूज्य मुनि श्री समता सागर जी, मुनि श्री प्रमाण सागर जी एवं ऐलक श्री निश्चयसागर जी महाराज, श्री दिगम्बर जैन अतिशय क्षेत्र जतारा जी जिला टीकमगढ़ (म.प्र.) में दिनांक 10.1.2002 गुरुवार से दिनांक 28.1.2002 सोमवार तक विराजमान रहे है। इस अवधि में नगर जतारा में अपूर्व धर्म प्रभावना होती रही है। जहाँ प्रातः 9 से 10 तक प्रतिदिन परमपूज्य महाराजत्रय में से क्रमशः एक महाराजश्री के मंगलमय प्रवचनों का धर्म लाभ मिलता रहा, दोपहर 2 बजे से सभी पूज्य महाराजों के श्री मुख से अनेक ग्रंथों की वाचना करते समय उनकी विस्तृत व्याख्या सुनने का सौभाग्य प्राप्त होता रहा, वहीं सायं 5.30 से आचार्य भक्ति (गुरु भक्ति) के बाद परम पूज्य मुनि श्री समता सागर जी महाराज के मंगलमय सान्निध्य में मेरी भावना, महावीराष्टक एवं अन्य स्तोत्रों की सरस व्याख्या सुनने सस्वर सुन्दर भजनों एवं गीतों को सुनने, प्रश्न मंच एवं पुरस्कार पाने आदि कार्यक्रम आनन्द यात्रा के अंतर्गत नित्य हुआ करते थे। इसी समय प. पूज्य ऐलक श्री निश्चयसागर जी महाराज के द्वारा छोटे छोटे बालक, बालिकाओं को नैतिक एवं धार्मिक शिक्षा प्रदान की जाकर उन्हें सुसंस्कारित भी किया जाता था। सभी कार्यक्रमों में श्रद्धालुओं की अपार भीड़ रहती थी।

उक्त अवधि में दिनांक 15.1.2002 मंगलवार को मुख्य बाजार में, दिनांक 17.1.2002 गुरुवार को जनपद कार्यालय के प्रांगण में एवं गणतंत्र दिवस की 53वीं वर्षगांठ के उपलक्ष्य में राष्ट्र के नाम धर्म सन्देश प्रदान करने हेतु दिनांक 26.1.2002 दिन शनिवार को पुनः बाजार में धर्म सभाओं के आयोजन किये गये, जिनमें परम पूज्य तीनों महाराजों के मंगलमय, सार गर्भित प्रवचनों का धर्म लाभ हजारों जैन-जैनेतर एवं सभी वर्ग के श्रद्धालुओं ने उठाया। उक्त धर्म सभाओं में जतारा क्षेत्र के विधायक श्री सुनील नायक, जिला पंचायत अध्यक्ष श्रीमती चन्दा सिंह गौर, जतारा जनपद अध्यक्ष श्री सुरेन्द्र सिंह गौर, उपाध्यक्ष श्री हीरालाल कुशवाहा, नगर पंचायत अध्यक्ष श्री अब्दुल लतीफ चौधरी, नगर के सभी एडवोकेट महानुभाव, पत्रकार, समाज सेवी महानुभावों एवं समीपी स्थानों के सरपंच महोदय, ग्रामवासी एवं नगर के अनेक प्रतिष्ठित महानुभावों ने प.पू. मुनि संघ के चरणों में श्रीफल अर्पित कर आशीर्वाद प्राप्त किया।

दिनांक 17.1.2002 को धर्मसभा में श्री दयोदय पशु सेवा केन्द्र श्री पपौरा जी के लिये स्थानीय समाज ने एक लाख साठ हजार के लगभग राशि दान में प्रदान की तथा जतारा गौ शाला के लिये जतारा विधायक श्री सुनील नायक ने विधायक निधि से दो लाख रुपये दान देने की घोषणा की।

कपूरचन्द्र जैन 'बंसल'
जतारा

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आपके पत्र, धन्यवाद : सुझाव शिरोधार्य

We are very much pleased to read JINBHASHIT regularly which are sent to us by our parents from India. We draw immense satisfaction and peace from its readings.

You have founded JINBHASHIT and have been editing it with rare insight and excellent skill. Its issues contain rare mosaic of religious, social and spiritual concerns as people experienced them across India and world. Its issues reflect the grass roots concerns of our society with clarity and at a gutsy distance from the sloppy spiritual world of press releases and stagemanaged interviews. You cut through the swathes of many complex social issues in putting common religious principles directly in focus in a straight forward manner.

We highly appreciate your commandable contribution in the presentation of Jain principles in simple words intelligible to a comman man. You never promote religious fanaticism and fundamentalism. You identify and celebrate grassroots letter writers. You are running JINBHASHIT with vigour and without making any compromise on your time tested principles. You have set best and highest standards of journalism that JINBHASHIT deserves.

We wish all the success to you in your present endeavour.

With best regards.

Vikas - Veenu Singhai 522-5745
Dalhosie Road, Vancouver, L.B.C.
V6 T2 J1, CANADA
Tel. : 604 221 6363

जिनभाषित अंक दिसम्बर 2001 का पढ़ा जिसमें सम्मानीय विद्वान लेखक डॉ. श्री सुरेन्द्र कुमार जी जैन 'भारती' का लेख 'वर्तमान सामाजिक असमन्वय के कारण और उनका निराकरण' पढ़ा। वास्तव में यह भारती साहब का सूक्ष्म और गहन अन्वेषण ही है जो कि समाज में पनपती असमन्वय व दिशाहीन हुई युवा पीढ़ी की तरफ हमारा ध्यान आकर्षित करता है। आज आर्थिकवाद, भौतिकतावाद, संचार साधनों का प्रभाव, धार्मिक शिक्षा का अभाव, दूषित खानपान आदि चीजें हमारे समाज पर काली छाया की तरह मँडरा रही हैं तथा हमारी चेतना शक्ति को पंगु बना रही हैं, जिससे हम दायित्वविहीन हो रहे हैं। किसी ने ठीक ही कहा है कि यदि किसी समाज को कमजोर करना है तो उसकी संस्कृति को नष्ट कर दो, उनके ग्रंथों को नष्ट कर दो, उनमें शिक्षा का अभाव कर दो और जब इन चीजों का अभाव हो जायेगा तब समाज अपने आप टूट जायेगा और आज के वातावरण में पाश्चात्य शैली हमारी सम्पूर्ण संस्कृति को नष्ट करने पर तुली हुई है। आवश्यकता है आज संस्कृति की रक्षा की, जिनवाणी के संरक्षण, संवर्द्धन की तथा भारतीजी जैसे समाज संचेतकों की, जिनके अथक प्रयास व अन्वेषणयुक्त लेखनी के माध्यम से हम समाज समन्वयता को बरकरार रखें और सौहार्द का वातावरण बनायें ताकि समाज बिना किसी बाधा के निरन्तर प्रगति की ओर अग्रसर रहे। श्री भारती जी की सटीक एवं निडर अभिव्यक्ति की मैं भूरि-भूरि प्रशंसा करता हूँ। नववर्ष की हार्दिक शुभकामनाओं के साथ।

निर्मल कासलीवाल
सांगानेर, जयपुर

जिनभाषित का दिसम्बर, 2001 का अंक प्राप्त हुआ। इससे पूर्व के सभी अंक नियमित रूप से उपलब्ध हुए। इन अंकों में संकलित विषय सामग्री न केवल सम्पादकत्व की प्रतिभा की प्रतीति कराती है, वरन् संपादक की दूरदर्शिता की ओर भी इंगित करती है।

वस्तुतः जिनभाषित के समस्त अंकों के प्रायः-प्रायः सभी सम्पादकीय व लेख आदि को सूक्ष्मता और गहनता से पढ़ने का सौभाग्य मिला। प्रत्येक अंक का सम्पादकीय ज्ञानवर्द्धक तो है ही, इसके अतिरिक्त, अंकों में संकलित प्रत्येक लेख आपकी विद्वता का श्रेष्ठ परिचायक है। इस अंक के प्रथम पृष्ठ पर ही दो आर्यिका माताओं के फोटो सहित नवीनतम समाचार 'दो समाधियाँ' ने पत्रिका में और अधिक निखार ला दिया है।

दिसम्बर 2001 में "वर्तमान सामाजिक परिस्थिति में असमन्वय के कारण और उनका निराकरण" शीर्षक से प्रकाशित डॉ. भारती का आलेख अनिबद्ध पढ़ गया। लेख में प्रयुक्त शब्द न केवल हृदय को स्पर्श करते हैं, अपितु वे अन्तस्तल को झिंझोरकर रख देते हैं। लेखक ने वर्तमान में समाज जिस दिशा की ओर अग्रसर हो रहा है, उस सामाजिक एवं धार्मिक वातावरण एवं उसके बदलते जा रहे परिवेश पर करारी व सटीक चोट की है। लेख में चर्चित असमन्वय का प्रत्येक कारण वर्तमान समाज में फैलते जा रहे विष की ओर संकेत करता हुआ जैसे हमें चेतावनी दे रहा है कि हमारे कदम गलत दिशा की ओर बढ़ रहे हैं। इनका अध्ययन, चिन्तन व मनन करने के बाद भी हम नहीं सम्हले तो हमारा क्या हश्र होगा, यह तो विधाता ही जाने, किन्तु हमें पतन की गहरी खाई में गिरने से फिर कोई नहीं बचा सकता। व्यक्तिवाद तेजी से पनप रहा है और उसमें भी मैं या अहम की भावना सामाजिक चेतना को लुप्तप्राय करती जा रही है। एक तरफ तो व्यक्ति में अपने कर्म के प्रति लगाव कम हो रहा है तो दूसरी तरफ उसमें श्रेष्ठ व्यक्तिगत गुणों - त्याग, सेवा और समर्पण-का झरना शुष्क होता प्रतीत हो रहा है। आज के संचार साधनों विशेषकर टी.वी. ने तो सामाजिक संबंधों को तार-तार कर दिया है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

इसके उपरान्त भी डॉ. भारती द्वारा अपने इस आलेख में सुझाये गए उपायों को व्यवहार में लाएँ, अपना आचरण उनके अनुकूल बनायें तो हमारा धार्मिक व सामाजिक ढाँचा पुन: सुधर सकता है और अपनी प्रतिष्ठा तथा निष्ठा को हिमालय की बुलंदी तक ले जा सकता है।

डॉ. भारती ने लेख के माध्यम से मंदिरों की भूमिका में बदलाव का जो पक्ष रखा है वह वर्तमान अवस्था का शत-प्रतिशत सही चित्रण है जो सामाजिक भावना को बुरी तरह तिरोहित कर रहा है। विचार तो और भी बहुत आ रहे हैं, किन्तु उन्हें यहीं विराम देते हुए लेखक व सम्पादक दोनों को साधुवाद एवं 'जिनभाषित' एक उच्चस्तरीय पत्रिका के लिये हार्दिक शुभकामनाएँ।

डॉ. विमलचन्द जैन
एलआईजी-236, कोटरा सुल्तानाबाद,
भोपाल-3

सर्वोत्तम श्रेणी की अत्यधिक उपयोगी सामग्री, आधुनिक साज-सज्जा से परिपूर्ण 'जिनभाषित' के सफल संपादन हेतु मेरी अनेकानेक बधाइयाँ स्वीकार कीजिये। जिनभाषित निश्चित ही जनप्रिय सिद्ध होगा।

जैसे ही 'जिनभाषित' की प्रथम झलक देखने मिली थी, मैं उसका 'आजीवन सदस्य' बन गया था।

'जिनभाषित' मेरे परिवार के प्रत्येक सदस्य के मन को इतनी अधिक भा गई है कि हम सभी माह के नवीन अंक का बड़ी बेसब्री से इंतजार करते हैं। जैसे ही 'जिनभाषित' प्राप्त होती है परिवार का प्रत्येक सदस्य उसे सबसे पहिले पढ़ना चाहता है।

जिनभाषित की विषय-सामग्री धर्ममय, अत्यधिक उपयोगी, ज्ञानवर्धक लेख, नवीन गतिविधियों की सूचना, धार्मिक समाचार भी प्रदान करता है। शंका-समाधान नई-पीढ़ी को नई दिशा प्रदान करेगा।

विशेष समाचार (दिसम्बर 2001) 'दो समाधियाँ' पढ़कर मन बहुत भारी हो गया। दो आर्यिकाओं की कमी समाज की अपूरणीय क्षति है।

सिंघई सुभाष जैन 'आस'
ए-106, सागर केम्पस
चूना भट्ठी, कोलार रोड, भोपाल

जिनभाषित अंक 7, वर्ष 1 में आपका सम्पादकीय लेख पढ़ा। हमारे द्वारा 'क्या आर्यिका माताएँ पूज्य हैं?' इस प्रकाशित ग्रंथ पर आपका ध्यान गया एवं आर्यिका माताएँ पूज्य हैं, इस बात को आपने स्वीकार किया इससे प्रसन्नता हुई। क्या मैं आशा करूँ कि आपके सम्पादकीय के प्राथमिक अंश आदरणीय श्री रतनलाल जी बैनाड़ा को भी स्वीकार होंगे? फिर भी तोड़-मरोड़कर के अपनी ही बात को पेश करने के दुस्साहस से आप दूर नहीं हो सके, इस पर भी आश्चर्य है।

पहिले तो आर्यिका श्राविका ही है, ऐसा घोषित करने का प्रयास हुआ। उसका जवाब आर्यिका विदुषी पूज्य विशुद्धिमति माताजी ने दिया (अभी जिनका स्वर्गवास हुआ है) कि आर्यिका आर्यिका है, श्राविका नहीं। तब आर्यिका आर्यिका है मुनि नहीं, इस तरह की घोषणा का प्रयास कर आर्यिका असंयमी अपूज्य है, दिखाने का दुस्साहस किया गया और जब 'क्या आर्यिका माताएँ पूज्य हैं?' इसके द्वारा आर्यिका माताएँ पूज्य सिद्ध की गईं एवं उनकी नवधा भक्ति होनी चाहिये, यह सप्रमाण सिद्ध किया गया तो अब आपका यह प्रयास कि 'आर्यिका माता पूज्य, मुनि परमपूज्य' है, यह कहकर उनको नवधाभक्ति से दूर रखने का यह एक और दुस्साहस आपके माध्यम से सामने आया। अब आगे और क्या प्रयास होगा, भगवान ही जाने। अच्छा हुआ कि इस विवाद को बल मिला है और जनमानस के सामने सत्य आ रहा है। साथ ही तोड़-मरोड़कर अपनी ही बात को पुष्ट करने का मानस भी जनता में आ रहा है। भविष्य उज्ज्वल है।

भरत कुमार काला

'जिनभाषित' मानव मन का दर्पण है, जिसमें अपना ही प्रतिबिम्ब नहीं बल्कि समाज, देश और जागरूक विद्वानों का सही प्रतिबिम्ब दिखाई देता है।

आप जो असरदार आलेख और पाठकों की प्रखर प्रतिक्रियाएँ प्रकाशित करते हैं, उसके लिये बहुत-बहुत धन्यवाद एवं बधाई। दिस. 2001 के सम्पादकीय ने तो मेरे मन की बहुत सारी शंकाएँ निर्मूल कर दीं। यह एकदम सत्य है ''आर्यिका माता पूज्य, मुनि परमपूज्य।''

इस पत्रिका का कवर पृष्ठ देखकर उस पावन तीर्थ के साक्षात् दर्शन हो जाते हैं। आचार्यों एवं मुनियों के आलेखों के अतिरिक्त आप जो ''साभार'' लिखकर प्राचीन विद्वानों के आलेख तथा बोधकथा या प्रेरक-प्रसंग प्रकाशित करते हैं, वे यथार्थ में विचारोत्तेजक, श्लाघनीय होते हैं। इस पत्रिका की प्रतीक्षा नये माह के प्रारंभ होते ही तीव्रता से पूरे परिवार के सदस्य करने लगते हैं। यह पत्रिका आकर्षक साज-सज्जा के कारण छोटे-छोटे बच्चों को भी अत्यन्त प्रिय लगती है। उन्हें बोधकथा में ही 'चम्पक' जैसा आनन्द आ जाता है। मुखपृष्ठ भी सुन्दर है।

डॉ. रमा जैन, छतरपुर (म.प्र.)

आज 'जिनभाषित' जनवरी 2002 अंक मिला, प्रसन्नता हुई। सम्पादकीय 'शासन देवता सम्मान्य, पंच परमेष्ठी उपास्य' आद्योपान्त पढ़ा। शोधपरक प्रस्तुति के लिये बधाई। विश्वास है कि संहितासूरि पं. नाथूलाल जी जैसे सम्माननीय प्रतिष्ठाचार्य आदि महानुभावों की भावनाओं से सुसंगत होगा।

आचार्यकल्प पं. टोडरमल जी ने मोक्षमार्ग प्रकाशक में व्यन्तर देवादिक का स्वरूप और उनकी पूजा का निषेध, जिनभक्त क्षेत्रपाल, पद्मावती आदि देवियों के पूजन का निषेध किया है।

आचार्यकल्प पं. आशाधर जी के दृष्टिकोण को सांगोपांग समझना अपेक्षित है। पं. नेमचन्द डोंणगाँवकर ने 'पं. आशाधर व्यक्तित्व एवं कर्तव्य' पुस्तक में नित्यमहोद्योत के आधार पर वही निष्कर्ष निकाले हैं, जिनसे आपने असहमति व्यक्त की है। ऊँ इन्द्र आगच्छ, आगच्छ (पृष्ठ 110-115)। पुनर्विचार अपेक्षित है।

'साथियों की सौगात' श्री माणिकचन्द जैन पाटनी का आलेख समाज की स्थिति का दिग्दर्शक है। यदि शासन और इतर समाज के संवेदनशील महानुभाव जैन समाज की संवेदनहीनता के विपरीत टिप्पणी नहीं करते, तो शायद यह घटना अनघटी जैसी विस्मृत हो जाती। यह ज्ञातव्य है कि जैन समाज की केन्द्रीय संस्थाओं का केन्द्र इंदौर ही है। हमारी उत्सवप्रियता को ग्रहण अवश्य लगेगा।

'दही में जीवाणु हैं या नहीं' विषय विचारोत्तेजक है। केवलीप्रणीत व्यवस्थानुसार वैज्ञानिक अनुसंधान हेतु जैन समाज को वांछित क्षेत्र में उत्प्रेरक का कार्य करना अभीष्ट है। 'श्रद्धायुक्त नमस्कार में चमत्कार' के निष्कर्षों की सर्वव्यक्ति नहीं होती।

पत्रिका में समाचारों के साथ ही आगमाधारित आलेखों से जनजागरण हेतु समुचित सामग्री देते रहने की कृपा करते रहें। कुशल सम्पादन हेतु बधाई।

पत्रिका की एक निश्चित साइज निर्धारित करने की कृपा करें ताकि

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

फाइल ठीक बने। जुलाई से दिसम्बर तक के अंकों की प्रतीक्षा कर रहा हूँ।

डॉ. राजेन्द्र कुमार बंसल
बी-369, ओ.पी.एम. कालोनी
अमलाई (शहडोल म.प्र.)

'जिनभाषित' के दिसम्बर एवं जनवरी के अंक यथासमय मिले। दिसम्बर के अंक में सम्पादकीय 'आर्यिका माता पूज्य, मुनि परमपूज्य' आचार्य श्री विद्यासागर जी महाराज पर प्रकाशित सामग्री तथा डॉ. सुरेन्द्र भारती का लेख 'वर्तमान सामाजिक असमन्वय के कारण' एवं समाधिमरण पर स्व. मिलापचंद्र कटारिया का लेख विशेष ज्ञानवर्द्धक तथा समसामयिक सामाजिक परिस्थितियों का दिग्दर्शन कराते हैं।

जनवरी अंक का सम्पादकीय 'शासन देवता सम्मान्य, पंचपरमेष्ठी उपास्य' एक शोधपरक लेख है। सम्मान्य और उपास्य में जो लोग अंतर नहीं समझते हैं, वे तो शासन देवी-देवताओं को ही सब कुछ मानकर चलते हैं। कुछ विशिष्ट मंदिरों में वीतराग देव की अपेक्षा शासन देवी-देवताओं के सामने दीपक जलानेवाले भक्तगण अधिक मिलते हैं। वे वीतराग देव का पूजन नहीं करते, परन्तु सरागी देवताओं को पूजते हैं। अत: ऐसी स्थिति में श्रद्धान 'कहाँ' तक रहेगा? आशा है, आपका लेख समाज के लोगों को प्रेरणा देने में सहायक बनेगा।

डॉ. नरेन्द्र जैन 'भारती'
34, एम.जी. रोड, सनावद (म.प्र.)

मासिक पत्रिका 'जिनभाषित' के सभी अंक मैंने पढ़े हैं, बहुत अच्छी लगी। प्रत्येक अंक में कुछ-न-कुछ नवीनता तथा सभी ज्ञानवर्द्धक सामग्री मिलती ही है। जनवरी 2002 के अंक में सम्पादकीय 'शासन देवता सम्मान्य, पंचमरमेष्ठी उपास्य' पढ़ा, इसे पढ़कर बहुत प्रभावित हुआ हूँ। सभी तथ्यों का उदाहरण के साथ समाधान किया गया है। यदि इस प्रकार से तथ्य उदाहरणों द्वारा समाधानित होते रहें, तो समाज में फैले अंधविश्वासों एवं कुरीतियों को निश्चित रूप से समाप्त करने में सफलता प्राप्त होगी।

प्रत्येक अंक में किसी-न-किसी स्तुति का अर्थ प्रकाशित किया जा रहा है, जो बहुत उपयोगी है। इससे स्तुति सही पढ़ने में आती है तथा अर्थ भी ज्ञात हो जाता है। प्राय: लोग स्तुतियों को अशुद्ध पढ़ते हैं।

आपके सम्पादन में यह पत्रिका दिनोंदिन प्रगति करती रहे, इन्हीं शुभकामनाओं के साथ।

लक्ष्मीचन्द्र जैन
(सेवानिवृत्त प्राचार्य)
वार्ड नं. 3, गली नं. 3, गंजबासौदा (म.प्र.)

'जिनभाषित' का जनवरी 2002 का अंक हस्तगत हुआ। मुखपृष्ठ पर ही श्रवणबेलगोला-स्थित जैन मंदिर का चित्र देख मन प्रसन्नता से भर गया। अन्दर के पृष्ठों पर जो भी लेख हैं, उनके विषय में जितना कहा जाये, कम ही होगा। ''शासन देवता सम्मान्य, पंचपरमेष्ठी उपास्य'' शीर्षक से पूरे सात पृष्ठों का सम्पादकीय लेख पढ़कर कई ऐसी शंकाओं से मन को मुक्ति मिली, जिस पर बहुत अधिक प्रकाश अब तक नहीं डाला जा सका था। ऐसे लेख जैन समाज के साथ-साथ जैन साहित्य एवं इतिहास पर शोध करनेवालों के लिये भी अति उपयोगी होते हैं। आपकी कलम और लेखनी को कोटिश: धन्यवाद। दही के विषय में जो विचार-कुविचार आते रहते हैं, उस पर श्री निर्भयसागरजी का लेख वैज्ञानिक सत्यों को उजागर करने वाला है। डॉ. वृषभ प्रसाद जी जैन ने जिस ग्रंथ के माध्यम से सुभाषित और सत्संगति की महत्ता को स्पष्ट करने की चेष्टा की है, वह उनके भाषा शास्त्र के माध्यम से ही स्पष्ट हो सकती थी, ऐसे विद्वान तो जिस विषय को छूते हैं, उसकी सारी बातों को पाठकों के सामने चित्रपट की तरह खोल कर रख देते हैं। ढेर सारी गंभीर समस्याओं पर विचार-विमर्श और माथापच्ची करने के बाद जब मस्तिष्क बोझिल सा होने लगे, तो शिखरचन्द्र जी के व्यंग्य लेख से हँसी और मुस्कुराहट स्वत: फूटने लगती है और मन हल्का हो जाता है। आपने उनके लेख को सही स्थान देकर पाठकों की रुचि का पूरा ख्याल रखा है। पत्रिका में जिस तरह के समाचार और जैन जगत की गतिविधियाँ दी गई हैं, उससे कहाँ-क्या हो रहा है, उसकी पूरी जानकारी हमें प्राप्त हो जाती है। 'जिनभाषित' का जो स्टैण्डर्ड आपने अब तक बनाये रखा है, उसमें किसी तरह की कमी नहीं आने पावे, इस पर निश्चित रूप से ध्यान देंगे। पत्रिका निश्चित रूप से अंधकार का दीपक साबित हो रहा है, इसमें कहीं कोई संदेह नहीं है।

डॉ. विनोद कुमार तिवारी
रीडर व अध्यक्ष, इतिहास विभाग
यू.आर. कालेज, रोसड़ा (समस्तीपुर) (बिहार)

'जिनभाषित' के संदर्भ में समीक्षात्मक विचार आप तक पहुँचाने का प्रयास कर रहा हूँ। आशा है आप विश्लेषणात्मक ढंग से की गई समीक्षा को अन्यथा नहीं मानेंगे। यद्यपि आजकल प्राय: लोग पत्रिकाओं के प्रकाशन पर बधाई देने, प्रशंसा करने को ही अपना कर्तव्य समझते हैं। यदि थोड़ी भी आलोचना होती है तो सम्पादक और प्रकाशक सहन नहीं करते।

1. जून अंक का सम्पादकीय, 'लेख' है। सम्पादकीय किसी प्रसंग/घटना को आधार बनाकर प्रस्तुत किया जावे, तो बेहतर होगा। अगले अंकों में आपने इस प्रक्रिया को अपनाया भी है।

2. पत्रिका प्रकाशन की आवश्यकता क्यों? इन प्रश्नों को पाठक वर्ग ने उठाया है, लेकिन आपने इसका जिक्र तक नहीं किया। आगे आप इसका समाधान करेंगे, तो ठीक रहेगा।

3. जुलाई-अगस्त संयुक्तांक का सम्पादकीय भी जीवनवृत्त है। मुनिद्वय पूज्य प्रमाणसागरजी और समतासागरजी के प्रवचनांशों का अध्ययन भी किया जाना चाहिये, जिनमें प्रमाणसागरजी ने सामाजिक कुरीति दहेज पर केन्द्रित बातें कहीं हैं। उनका सुझाव है कि हम जितना द्रव्य मंदिर बनाने में व्यय करते हैं, उतने में कई गरीब कन्याओं की शादी हो सकती है, क्या उनके शिष्यगण इस सुझाव को मान्य करेंगे?

4. समतासागरजी ने धार्मिक और धर्मात्मा का विश्लेषण किया है कि आज लोग क्रियाकाण्ड के माध्यम से धार्मिक बन रहे हैं, धर्मात्मा नहीं। पर्युषण पर्व में भी लोग दिखावा/प्रदर्शन करते हैं। दस दिनों तक भक्तिरंग में रमे लोग एकाएक दिशा परिवर्तन कर लेते हैं, क्यों?

5. आपके लेख/सम्पादकीय समाज में व्याप्त विषमताओं/विकृतियों को उजागर करते हैं। आशा है, आप अपनी पैनी कलम से समाज को झकझोरने की इस कोशिश को निरन्तर जारी रखेंगे।

दामोदर जैन
6/791, सिद्धबाबा की कालोनी,
टीकमगढ़ (म.प्र.)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सम्पादकीय

नई पीढ़ी धर्म से विमुख क्यों?

धर्म की रस्म अदायगी

अधिकतर लोग श्रद्धा से धर्म को अंगीकार नहीं करते, मजबूरी से उसकी रस्म अदायगी करते हैं। मजबूरी के कई कारण हैं - जैसे, जैन कुल में जन्म लेना, मंदिर, मूर्ति, गुरु, उपदेश, पर्व, उत्सव आदि धार्मिक साधनों का मौजूद होना, आत्मा-परमात्मा, बन्ध-मोक्ष, स्वर्ग-नरक आदि की शंका होना, लोकमत का भय, सामाजिक प्रतिष्ठा की आकांक्षा आदि। जैनकुल के संस्कार हमें जब कभी मंदिर की ओर खींच लाते हैं, मूर्ति के आगे सिर झुकाने, अर्घ अर्पित करने, माला फेरने और शास्त्र का एकाध पन्ना पलट लेने के लिये मजबूर कर देते हैं। इन्हीं के कारण हम यदा कदा एकाशन-उपवास जैसा कोई व्रत धारण कर लेते हैं। किसी किसी को, मंदिर है इसलिये जाना पड़ता है, मूर्ति है, इसलिये नमन करना पड़ता है। गन्धोदक रखा रहता है, इसलिये उसका भी उपयोग अनिवार्य हो जाता है, माला दिखाई देती है इसलिये उसे फेरने की क्रिया करनी पड़ती है, प्रवचन होता है तो सुनने के लिये बैठना पड़ता है और पर्व आते हैं तो उनकी परम्परा निभानी पड़ती है। कभी-कभी एक शंका भी मन में व्यापती है। कहीं आत्मा बन्ध-मोक्ष, स्वर्ग-नरक सचमुच में न हों! अगर हुए तो धर्म न करने पर बड़ा कष्ट भोगना पड़ेगा। इसलिये कुछ धार्मिक क्रियाओं के द्वारा नरक, तिर्यंच आदि योनियों से बचा जा सकता है तो कर डालने में क्या हानि है? इस शंका से कोई-कोई धर्म का दस्तूर निभाते हैं। कुछ सोचते हैं कि दूसरे लोग धर्म करते हैं, तो कहीं धर्म वास्तव में सच्चा न हो। अगर हुआ तो वे उसका लाभ उठा ले जायेंगे और हम वंचित रह जायेंगे। इसलिये हम भी करें। किसी को यह भय सताता है कि सब लोग धर्म करते हैं, मैं नहीं करूँगा तो लोग क्या कहेंगे? और कोई समाज में धर्मात्मा के रूप में प्रसिद्ध होकर सामाजिक प्रतिष्ठा प्राप्त करना चाहता है।

इन कारणों से धर्म की रस्म अदा की जाती है, श्रद्धा से नहीं। क्यों? इसलिये कि धर्म की असलियत में विश्वास नहीं है। मन में पक्का नहीं है कि आत्मा है, मोक्ष होता है, स्वर्ग, नरक सचमुच में हैं। शास्त्र कहते हैं, गुरु उपदेश देते हैं, पर हृदय में बात जमती नहीं है। क्योंकि ये चीजें दिखाई नहीं देतीं और जो वस्तु दिखाई नहीं देती उसके लिये क्लेश सहना, समय गँवाना बुद्धिसंगत प्रतीत नहीं होता। प्रत्यक्ष प्रमाण से कुछ और ही चीजें सत्य मालूम होती हैं। जिन चीजों को शास्त्र और गुरु असत्य बतलाते हैं, दुःख का कारण ठहराते हैं, वही एकमात्र सत्य और साक्षात् सुख का कारण जान पड़ती हैं। आखिर देखने में यही तो आता है कि मनुष्य संसार की वस्तुओं के अभाव में ही दुःखी है। वस्तुओं की प्राप्ति से ही दुःख मिटता है, दरिद्रता मिटती है, सुख होता है, सुविधा होती है, समृद्धि आती है, बड़प्पन आता है, प्रतिष्ठा होती है, पूजा होती है, लोग पूछते हैं, इर्दगिर्द मँडराते हैं, सभा-उत्सवों का अध्यक्ष बनाते हैं, मालाएँ पहनाते हैं 'सर्वे गुणाः काञ्चनमाश्रयन्ते।' प्रत्यक्ष अनुभव शास्त्र के कथन को अविश्वसनीय सिद्ध करता है, इसलिये हम सांसारिक वस्तुओं का ही अन्वेषण करते हैं।

किन्तु, शास्त्र, गुरूपदेश इस कार्य में खलल डालते हैं। वे सांसारिक वस्तुओं को नश्वर और दुःख का कारण बतलाते हैं। वे इतने जोर-शोर से यह बात करते हैं कि कभी-कभी उनकी बात सत्य मालूम होती है। इससे हम द्वन्द्व में पड़ जाते हैं। प्रत्यक्ष अनुभव वस्तुओं को महत्त्वपूर्ण सिद्ध करता है, शास्त्र और गुरु उन्हें तुच्छ कहते हैं और आत्मा को सारभूत बतलाते हैं। किन्तु मन को यह बात पूरी तरह गवारा नहीं होती, इसलिए हम आधे-अधूरे मन से कुछ मोटी मोटी धार्मिक क्रियाएँ भी कर लेते हैं, पर धर्म को ज्यादा लिफ्ट नहीं देते। उसे अपने ऊपर इतना हावी नहीं होने देते कि वह हमारे सांसारिक भोगों के मार्ग में बाधक बने। हमारा मुख्य कार्य वैभव का अनुसरण ही है। धर्म तो शौक, मनोरंजन और सुविधा की चीज है। हम कोई इतने नासमझ तो नहीं है कि एक अप्रत्यक्ष आत्मा और कल्पित मोक्ष सुख को सचमुच में सच समझ लें और उसके लिये प्रत्यक्ष सुख की सामग्री का त्याग कर दें। धर्म की वही क्रियाएँ हम करते हैं, जिनसे सांसारिक भोगों की प्राप्ति में हानि न पहुँचे, ज्यादा वक्त खराब न हो और शरीर तथा दिमाग को कष्ट न उठाना पड़े। मसलन कभी-कभार मन्दिर चले जाने में, भगवान के सामने सिर झुका लेने में, माला फेर लेने में, पूजा कर लेने में, आरती उतार लेने में अथवा भजन गा लेने में कोई नुकसान नहीं होता। इनमें ज्यादा वक्त नहीं लगता, इसलिये सांसारिक वस्तुओं की प्राप्ति के प्रयत्न में बाधा भी नहीं पहुँचती और शरीर तथा दिगाग को कष्ट भी नहीं होता। अतः ये काम हम कर लेते हैं। किन्तु धर्म का मर्म समझने में समय लगता है, उसमें सोचने समझने की आवश्यकता होती है, जिससे मस्तिष्क को कष्ट होता है। इसलिये हम स्वाध्याय के प्रपंच में नहीं पड़ते। जितना हम करते हैं उतने में धर्म होता हो तो हो जाए, न हो तो न हो। हमसे जितना होता है कर लेते हैं, बस।

धर्म का शार्टकट

जो धर्म के मर्म को जानते हैं वे कहते हैं - धर्म तो भावों की शुद्धि का नाम है अर्थात् रागद्वेषमोह को विसर्जित करना धर्म है। यह तो और भी वश की बात नहीं है। इससे सरल तो थोड़ा बहुत स्वाध्याय कर लेना है। तत्त्वचर्चा सुन लेना आसान है। इसमें तो सिर हिलाने और जुबानी जमाखर्च से ही काम चल जाता है। भावों की शुद्धि तो साधना की बात है। क्रोध को जीतना क्या सरल है? लोभ को त्यागना क्या आसान है? उसी से तो भोग-सामग्री का संचय होता है। मान कैसे छोड़ा जा सकता है? उसी के बल पर तो हम अपने को दूसरों

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

से श्रेष्ठ समझते हैं। और बिना मायाजाल के संसार की भोगसामग्री कहीं प्राप्त हो सकती है? वासनाओं में ही तो बड़ा लुत्फ आता है। इन्हीं को सन्तुष्ट करने में तो आनन्द की अनुभूति होती है।

नहीं, हमें तो ऐसा धर्म चाहिए जिसमें अपने को बदलने की साधना न करनी पड़े, संयम की तकलीफ न उठानी पड़े। अर्थात् कुछ भी न करना पड़े, फिर भी कुछ होता हुआ सा दिखाई दे। ऐसा धर्म है भावहीन कर्मकांड अर्थात् भावशुद्धि रहित पूजापाठ, भजन-आरती, एकाशन-उपवास, जप-स्वाध्याय आदि। इसमें न कुछ त्यागने की जरूरत है, न इन्द्रियसंयम की, न किसी के प्रति सहृदय होने की, न किसी से प्रेम करने की, न करुणाभाव की। वास्तविक कर्म (आचरण) से कर्मकाण्ड सरल है। हम हर जगह शार्टकट चाहते हैं। भावशून्य क्रियाएँ धर्म का शार्टकट हैं। इनमें न हर्रा लगता है, न फिटकरी और रंग चोखा हो जाता है अर्थात् धर्मात्मा कहलाने लगते हैं। जैसे भावशुद्धि और आत्मसंयम के बिना केवल पूजा-उपवास आदि से आदमी धार्मिक कहलाने लगता है, वैसे ही इनके बिना सम्यग्दृष्टि भी कहलाने लगता है, क्योंकि सम्यग्दर्शन तो भीतर की चीज है, उसे दूसरा कौन जान सकता है? और सम्यग्दर्शन होने पर भी अविरत रहने का प्रमाण आगम में मिलता ही है।

धर्म के सरलीकरण की माँग

'शार्टकट' ढूँढ़ने वाले ही कहा करते हैं कि धर्म का सरलीकरण या आधुनिकीकरण होना चाहिए। जैसे धर्म को किसी आदमी या समिति ने बनाया हो, अतः उसे जैसा हम बनाना चाहें वैसा बन सकता है और जिसे हम धर्म का नाम दे दें, वही धर्म कहलाने लगेगा। धर्म तो वस्तु का स्वभाव है। वह नेचरल है, उसमें कठिन और सरल के भेद की गुंजाइश ही नहीं है। क्या सूर्य का प्रकाश, चन्द्रमा की शीतलता, फूलों की सुगन्ध, पानी की तरलता कठिन है? और क्या उन्हें सरल बनाया जा सकता है? धर्म कोई शरीर या घर को सजाने वाली चीज या सभ्यता का तौर-तरीका भी नहीं है कि उसे आधुनिक बनाया जा सके। वह तो शाश्वत सत्य है। शान्ति आयेगी तो क्रोधादि विकारों के शमन से ही आयेगी, चाहे आज या हजारों वर्ष बाद। ऐसा नहीं है कि आज क्रोधादि के शमन से आती हो और हजारों वर्ष बाद उसके बिना भी आ सकती हो। अज्ञान सदा ज्ञान से ही दूर होगा। अज्ञान से अज्ञान दूर होने का अवसर कभी नहीं आ सकता। हाँ, हम स्वयं धर्म की साधना के योग्य न हों, यह संभव है। इसके लिये कोई जबर्दस्ती नहीं है। किसने कहा कि हम जिस कक्षा के योग्य नहीं है, उसमें पढ़ने जायें? हमारी योग्यता जिस कक्षा के अनुरूप है उसी में प्रवेश लें, तो पाठ्यक्रम कठिन प्रतीत न होगा। धीरे-धीरे ऊँची कक्षा में पहुँचते जायेंगे और उसका पाठ्यक्रम सरल मालूम होता जायेगा।

संतान का संस्कार नहीं

अपनी सन्तान के लिये हमारे पास कोई दिशा-निर्देश नहीं है। जो स्वयं भटका हुआ हो, वह दूसरे को क्या राह बतला सकता है? हम चाहते हैं कि हमारे बच्चे हमारा नाम उज्ज्वल करें, वे ऐसे बनें कि उनकी तारीफ हो, स्वयं सुखी हों और हमें सुख दें। पर उन्हें संस्कार ऐसे देते हैं जिनसे वे पथभ्रष्ट होते हैं और हमारी आकांक्षाओं और आदर्शों के ठीक विपरीत उतरते हैं। वस्तुतः हम उन्हें कोई संस्कार नहीं देते। कोरा छोड़ देते हैं, जिससे वे अपने आप ऐसे संस्कार अर्जित कर लेते हैं, जो उन्हें गर्त में ले जाते हैं। हमारी उपेक्षा ही वह कारण है जो उन्हें गलत संस्कारों की ओर ढकेलती है। हम उन्हें शृंगार देते हैं, पर संस्कार नहीं दे पाते। सम्पत्ति देते हैं, पर शान्ति नहीं दे पाते, साधन देते हैं, पर उसके सदुपयोग का विवेक नहीं दे पाते। हम उन्हें सब कुछ देते हैं, पर श्रेष्ठ जीवन देने में असमर्थ रहते हैं। हमारा स्वप्न होता है कि मेरा बेटा महान् बनेगा, लेकिन जब वह शराबी, जुआड़ी, मांसाहारी, व्यभिचारी, गुण्डा बन जाता है तो माथा पीटते हैं, जबकि इसमें हमारा ही हाथ होता है। हम एक श्रेष्ठ समाज की कामना करते हैं, किन्तु सदस्य ऐसे तैयार करते हैं जिनसे निकृष्ट समाज की रचना होती है। नीम का बीज बोकर आम के फल की आशा करते हैं। इस नौबत से बचने का एक ही उपाय है- जो सत्य है, शिव है, सुन्दर है उसकी ओर अपनी सन्तान को बचपन से ही उन्मुख किया जाए। आज जब अश्लील सिनेमा, दूरदर्शन के अश्लील दृश्य, अश्लील साहित्य, शराब, सिगरेट आदि कुपथ पर ले जाने वाले साधन चारों तरफ से उमड़ रहे हैं, तब सुपथ पर ले जाने का प्रयत्न कितना आवश्यक है, इसकी कल्पना की जा सकती है।

नई पीढ़ी धर्मविमुख क्यों?

यद्यपि माता-पिता धर्म करते हैं, किन्तु सन्तान पर उसका कोई असर नहीं पड़ रहा है। नई पीढ़ी धर्म से विमुख हो रही है। कारण? उसे बुजुर्गों का धर्म ढकोसला-मात्र दिखाई देता है। बालक और युवा किसी भी आदर्श का मूल्यांकन अपने आदरणीय व्यक्तियों के आचरण से करते हैं। यदि वह आदर्श उनके आचरण में अभिव्यक्त हो रहा है, तो उसे वे सत्य समझते हैं और उसकी ओर उन्मुख होते हैं। नहीं, तो उसे खोखला समझकर विमुख हो जाते हैं। भले ही कोई सिद्धान्त कितना ही सत्य और महान् क्यों न हो, वह हमें तब तक प्रभावित नहीं करता जब तक उसका दृष्टांत अपने आदर्श पुरुषों में नहीं मिल जाता। गुरु के उपदेश से अधिक हम गुरु के चरित्र से प्रभावित होते हैं। धर्म के दर्शन न मन्दिर में होते हैं, न मूर्ति में, न शास्त्र में, न कर्मकाण्ड में। उसके दर्शन तो धार्मिक के जीवन में होते हैं-'न धर्मो धार्मिकैर्विना।'

धर्म यदि अच्छी चीज है तो धर्मात्माओं के जीवन में उसका अच्छा असर दिखाई देना चाहिए। उनके व्यक्तित्व में आध्यात्मिक सौन्दर्य प्रकट होना चाहिए। प्राकृतिक आवेगों, विषयवासनाओं का शमन होना चाहिए और चित्त में शान्ति, भावों में साम्य, हृदय में प्रेम और करुणा तथा मन में दिव्य संगीत उत्पन्न होना चाहिए। लेकिन नई पीढ़ी देखती है कि तथाकथित धर्मात्मा सुबह से शाम तक और शाम से सुबह तक अनेक धार्मिक क्रियाएँ करते हैं, मन्दिर जाते हैं, भगवान् के दर्शन करते हैं, पूजा करते हैं, सामायिक करते हैं, स्वाध्याय करते हैं, माला फेरते हैं, चंदन लगाते हैं, घंटी बजाते हैं, उपवास करते हैं, भजन और आरती करते हैं, लेकिन उनके जीवन सुन्दर नहीं बन पाये हैं, वे बड़े कुरूप हैं, उनके रागद्वेषादि विकारों

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

में तनिक भी मन्दता नहीं आई है, विषय-वासनाओं का थोड़ा भी शमन नहीं हुआ है, इसलिये शान्ति की हल्की सी किरण भी उनके जीवन में प्रविष्ट नहीं हुई है। समस्त धार्मिक क्रियाएँ करते हुए भी वे कषायों की तपन से तपते हैं, विकारों की वेदना से पीड़ित होते हैं। उनके हित को तनिक भी आघात पहुँचा, उनके अहंकार को थोड़ी भी चोट लगी, उनकी इच्छा के विरुद्ध जरा भी काम हुआ और वे क्रोध की लपटों में झुलस जाते हैं और उसके आवेग में वे सभ्यता का सारा आवरण फेंककर अपने आदिम रूप में प्रकट हो जाते हैं। तब पता चलता है कि इनमें सभ्यता भी नहीं आ पाई, धर्म तो दूर रहा। सारी धार्मिक साधना पानी पर लकीर खींचने के समान व्यर्थ हुई। सास की बहू से नहीं बनती, पत्नी का पति से मेल नहीं बैठता, बाप-बेटे में असामंजस्य है, भाई-भाई में तनाव है, पड़ौसियों में अनबन है।

जिस धर्म से जीवन में जरा भी परिवर्तन नहीं हुआ, मनुष्य मनुष्य नहीं बन सका, सुखशान्ति की लेशमात्र उपलब्धि नहीं हुई, वह एक ढकोसला, एक पाखंड के अलावा और क्या प्रतीत हो सकता है? ऐसे धर्म में नई पीढ़ी को रुचि कैसे हो सकती है? उससे वह प्रभावित कैसे हो सकती है? रुचि न होना ही स्वाभाविक है। रुचि होती तो आश्चर्य होता।

किन्तु इसमें धर्म का दोष नहीं है, तथाकथित धर्मात्माओं का दोष है जो धर्म के नाम पर ढकोसला अपनाकर धर्म को कलंकित करते हैं। वस्तुतः नई पीढ़ी को वास्तविक धर्म के दर्शन ही नहीं होते, इसलिये वह झूठे धर्म को धर्म समझाकर उसे निरर्थक मान लेती है। यदि उसे बड़ों के आचरण में वास्तविक धर्म के दर्शन हों, तो उससे प्रभावित हुए बिना रह नहीं सकती।

सन्तान में अच्छे संस्कार डालने के लिये उसे धर्म के सौरभ से सुरभित करना आवश्यक है। इसके लिये जरूरी है स्वयं में धर्म के पुष्प का विकास। जैसे चंदन के वृक्ष की सुगन्ध से आस-पास के वृक्ष सुगन्धित हो जाते हैं, वैसे ही धर्म की सुगन्ध से आस-पास के लोग सुगन्धित हुए बिना नहीं रहते, शर्त यह है कि धर्म का पुष्प असली हो, कागजी नहीं।

किन्तु माया से अभिभूत होकर हम नकली फूलों को असली फूल समझकर सिर पर धारण किये हुए हैं, जिससे हमारे तन को सुगन्ध का रंचमात्र स्पर्श नहीं हो पा रहा है। कामना है कि हमारी दृष्टि से माया का आवरण हटे, ताकि हम असली फूलों को पहचान कर उन्हें अपने जीवन में खिला सकें, जिससे हम स्वयं सुरभित हों और हमसे चारों ओर सौरभ बिखर सके।

रतनचन्द्र जैन

समाज से अनुरोध

राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद् नई दिल्ली द्वारा कक्षा11वीं की इतिहास की पुस्तक के10वें अध्याय 'जैन धर्म और बौद्ध धर्म' नामक पाठ में शामिल जैन धर्म के बारे में अनर्गल बातों को, समाज के व्यापक विरोध के कारण विलोपित करने का निर्णय लिये जाने की जानकारी मिली है। अलवर निवासी एडवोकेट खिल्लीमल जी जैन एवं जैन संस्थाओं के पदाधिकारियों की सक्रियता से प्राचीन भारत पाठ्यपुस्तक से एनसीईआरटी, दिल्ली के विद्वान निदेशक प्रो. जे.एस. राजपूत द्वारा आपत्तिजनक अंश को हटाने की कार्यवाही की गई है। किन्तु उक्त पाठ्यसामग्री के लेखक प्रो. रामशरण शर्मा एवं उनके अन्य समर्थकों ने न्यायालय में दावा प्रस्तुत कर पाठ न हटाने एवं पाठ्यसामग्री में परिवर्तन न किए जाने की माँग की है। प्रो. रामशरण शर्मा अपने हठाग्रही स्वभाव के अनुरूप गलत सामग्री को हटाने की कार्यवाही का विरोध करते हुए न्यायालयीन प्रक्रिया अपना रहे हैं, ताकि दबाव बन जाये और उनकी मनगढ़ंत पाठ्य सामग्री ही विद्यार्थी पढ़ते रहें।

अतः श्री शर्मा एवं अन्य लेखकों की इस कार्यवाही की भर्त्सना की जानी चाहिए। साथ ही जैन समाज की शीर्षस्थ संस्थाओं, विद्वानों और विधि वेत्ताओं को आगे आकर विवादित सामग्री को हटवाने की पुरजोर कोशिश करनी चाहिए। जैन समाज की सभी प्रमुख संस्थाओं, तीर्थक्षेत्रों के पदाधिकारियों एवं समाज के प्रबुद्ध वर्ग से विनम्र आग्रह है कि सभी इस महत्त्वपूर्ण मामले में अपनी सार्थक भूमिका का निर्वाह करें और स्वयं भी न्यायालय में प्रकरण दर्ज कराते हुए अपना पक्ष स्पष्ट करें। इस प्रकरण में त्वरित कार्यवाही की आवश्यकता है।

सम्पादक

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आत्मा से परमात्मा तक पहुँचानेवाले अच्छे संस्कार

छपारा (म.प्र.), 17 जनवरी 2002, गर्भकल्याणक के दिन दिया गया प्रवचन

आचार्य श्री विद्यासागर

इस जीवात्मा के लिये आत्मा से परमात्मा तक पहुँचने के लिये आधारशिला की आवश्यकता है। इन पाँच दिनों के माध्यम से आत्मा से परमात्मा बनने की आधार शिला को ही दर्शाया जायेगा। संसार के नाश की प्रक्रिया को दर्शाने वाला यह पंचकल्याणक महोत्सव है। सिंहनी का दूध सुनते हैं सामान्य पात्र में नहीं अपितु स्वर्ण पात्र में ही रहता है। लोहे के पात्र में यदि उसे रख दिया जाये, तो उसमें छिद्र-छिद्र हो जाते हैं। वैसे ही यहाँ पर तीन लोक के नाथ का आगमन आज के दिन हुआ है। वह कौन सा पात्र है जो तीन लोक में तहलका मचाने वाली तीर्थंकर प्रकृति की सत्ता को लेकर आने वाले जीव के माता पिता बनेंगे। जो इस प्रकार के गर्भ में आने वाले जीव को जन्म देंगे, वे महान पुण्यशाली हैं। वह माता स्वर्ण पात्र की तरह होती है जो इस प्रकार के जीव को जन्म देती है।

तीर्थंकर प्रकृति एक ऐसी प्रकृति है, जैसे दीपक की ज्योति होती है, वह स्वयं प्रकाशित होती है और दूसरों को भी प्रकाश प्रदान करती है। तीर्थंकर प्रकृति की सत्ता लेकर आने वाला व्यक्ति मिट्टी के दीपक की तरह नहीं, रत्न दीप की तरह होता है, जिसका तल भी प्रकाशी होता है। वैसे तीर्थंकर का जीवन सम्पूर्ण रूप से प्रकाशमान होकर सबको प्रकाशित करने वाला होता है। कर्मभूमि में वासना की नहीं, कर्म की उपासना होती है। भोगभूमि में ही वासना होती है, वहाँ पर कर्म नहीं होता है। वैसे विवाह, वासना की पूर्ति के लिये नहीं होता है, यह तो भारतीय संस्कृति है, यहाँ पर विवाह एक आचार संहिता के अन्तर्गत होता है। इसिलये चार पुरुषार्थों में से काम भी एक पुरुषार्थ है। काम पुरुषार्थ इसलिये होता है कि कुल की परम्परा चले। संतान की प्राप्ति के लिये विवाह होता है। कुछ राष्ट्रों में संतानों को बढ़ाने के लिये विवाह होता है, उनका उद्देश्य केवल वोटों की संख्या बढ़ाना है। यह भारतीय संस्कृति में नहीं है।

तीर्थंकर का जन्म होता है तो फिर माता-पिता के लिय दो संतानों की इच्छा नहीं होती, एक में ही संतोष हो जाता है। और कहते हैं दोनों की वासना समाप्त हो जाती है और ब्रह्मचर्य को धारण कर लेते हैं। उनके जीवन में उदासीनता आ जाती है। जैसे सूर्य तो एक ही होता है, दो-तीन नहीं होते हैं, वैसे ही तीर्थंकर भी एक अकेले होते हैं इसके बाद कोई संतान नहीं होती है। यहाँ पर एक प्रश्न है- दो आदि क्यों नहीं होते हैं? उनका एक भाई और होता तो क्या बाधा आती? तो इसमें मेरा सोचना है दो में माता-पिता का लाड़ प्यार बँट जाता है, इसलिए तीर्थंकर अकेले ही होते हैं और उनका प्रभाव ही ऐसा होता है कि उनके माता-पिता को दूसरी संतान की इच्छा नहीं होती है। एक चिंतन का विषय है - तीर्थंकर का जीव जैसे ही गर्भ में आता है तो हजारों की संख्या में देव और देवियाँ उनकी सेवा में लग जाते हैं। ऐसे कौन से संस्कार हैं जो इसप्रकार का चमत्कार गर्भकाल से ही प्रारंभ हो जाता है। 6 माह पहले से रत्नों की वर्षा होने लगती है। एक उदाहरण है, जैसे रोटी बनाते हैं उसको गोल बनाना है, उस लोई को आटे में लगाकर बेलन चलाते हैं जिससे वह गोल बन जाती है। आटा इसलिये लगाते हैं, जिससे वह लोई चिपके न। वैसे ही तीर्थंकर का जीवन ऐसा होता है कि उसमें कहीं कोण नहीं होता है, वर्तुल की तरह होता है। उन्होंने अपने पूर्व जीवन में ऐसे संस्कार डाले होंगे, जिससे कोई रुकावट नहीं आती है। अब सोचना है, ऐसे वे कौन से संस्कार हैं? उनके इतिहास को पढ़ते हैं तो ज्ञात होता है कि सोलह कारण भावनाओं को उन्होंने पूर्व जीवन में भाया था। ऐसा महान पुण्यशाली जीव ही उस तीर्थंकर प्रकृति का बंध करता है और तीर्थंकर के रूप में इस धरती पर जनम लेकर तीर्थ का निर्माता होता है। आज हम अपनी आत्मा के ऊपर ऐसे संस्कार डालें, जिससे हमारे आगे-आगे प्रकाश फैलता जाये, हम अज्ञान के अँधेरे से बचकर ज्ञान के प्रकाश को पायें। यह भारत भूमि ही ऐसी है जहाँ पर संस्कार की बात नहीं होती है अपितु आत्मा से परमात्मा बनने की बात होती है। आप लोगों को संस्कार की बात समझनी होगी, क्योंकि यही संस्कार संतान पर पड़ने वाले हैं, जिसके माध्यम से अपने भविष्य का निर्माण करते हैं। आपके खानपान का प्रभाव भी आपके बच्चों पर पड़ता है। सुना है आजकल आप लोगों को घर का भोजन अच्छा नहीं लगता, होटल का भोजन अच्छा लगता है, होटल की बासी रोटी अच्छी लगती है, उसको अच्छे से फ्राई करके दे देते हैं, वह अच्छी लगती है। यही संस्कार बच्चों में पड़ते जा रहे हैं। सुनने में तो आया है कि कुछ बच्चे तो माता-पिता से भी चार कदम आगे होते हैं, चरित्रवान होते हैं,वे रात्रि में भोजन तो क्या पानी भी नहीं पीते, बिना मंदिर जाये भी पानी नहीं पीते, यह सब क्या है? तो पूर्व संस्कार भी इसमें कारण होते हैं। एक आम के पेड़ में दो आम लगते हैं, एक छोटा दूसरा बड़ा है, पेड़ एक है पर आम छोटे-बड़े क्यों हुए? दोनों एक से होने चाहिए थे? लेकिन नहीं, दोनों में एक से संस्कार नहीं हो सकते हैं, वैसे ही हमारी संतान पर संस्कार की बात है। आप लोगों का कर्त्तव्य है कि संतान को संस्कारवान बनायें, क्योंकि संतान ही कुल की परम्परा को चलाने वाली होती है। यदि अच्छे संस्कार नहीं हैं, तो परम्परा भी ठीक चलनेवाली नहीं है। अच्छे भावों के लिये हमें वैसे पात्र को बनाना जरूरी है, तब ही अच्छी परम्परा का निर्वाह होगा, और अच्छे जीवन का निर्माण होगा। आत्मा से परमात्मा तक पहुँचाने वाले अच्छे संस्कारों को अपने जीवन में लायें और अपनी संतान को संस्कारवान बनायें।

प्रस्तुति : मुनि श्री अजितसागर

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वीतरागदृष्टि से ही वैराग्य का जन्म

छपारा म.प्र., 18 जनवरी 2002, जन्मकल्याणक के दिन दिया गया प्रवचन

आचार्य श्री विद्यासागर

प्रतिदिन की भाँति अपनी इंद्र, सभा में सिंहासनारूढ़ है तभी अचानक उसका सिंहासन कंपायमान होता है। वह सोचता है ऐसा कौन सा व्यक्ति आ गया है, जो हमारे सिंहासन को हिलाने की क्षमता रखता है, सारे स्वर्ग में हमारी ही आज्ञा और ऐश्वर्य के बिना कुछ हो नहीं सकता है। ऐसा क्यों हो रहा है? ऐसा वह सौधर्म सभा में बैठा सौधर्म इंद्र है। उसका सिंहासन जब हिलता है तो वह सोचता है और अपने अविधज्ञान से जानता है कि तीन लोक के नाथ होने वाले तीर्थंकर बालक का जन्म अयोध्या नगरी में होता है तो उसका इसी तरह आसन कम्पायमान होता है। वह सौधर्म इंद्र एक साथ 170 तीर्थंकरों का भी जन्म हो जाये तो वह सबका महोत्सव मनाता है। यहाँ पर हमें एक पंच कल्याणक करने में पसीना छूटने लगता है। इंद्र को किसी बैरी की चिन्ता नहीं होती है, यदि किसी बैरी की चिन्ता होती है तो एक कर्म बैरी की चिन्ता होती है। संसार में संसारी प्राणी के लिये कर्म बैरी की चिन्ता होनी चाहिए। उससे कैसे बचा जाये, यह चिन्ता होनी चाहिए। आज होनहार भगवान का जन्म हुआ है। क्योंकि भगवान का जन्म नहीं होता भगवान तो बना जाता है।

वह इंद्र आज्ञा देकर जन्म महोत्सव कराता है और स्वयं जाकर भगवान का पांडुकशिला पर जन्म अभिषेक महोत्सव करता है। आज वह महोत्सव स्थापना निक्षेप की अपेक्षा से मनाया जा रहा है। गर्भ से लेकर मोक्ष तक का महोत्सव वह इंद्र मनाता है। वह सभी कार्य सानंद सम्पन्न करता है। ऐसा तेज पुण्य इस संसार में और किसी का नहीं होता, जितना तीर्थंकर का होता है। कोई इतने तेज पुण्य को बाँध भी नहीं सकता। इसमें कारण क्या है? इतना तेज पुण्य कैसे बँधता है? तो सोलह कारण भावनाएँ इसमें कारण है। जिसके द्वारा इतने तेज पुण्य का बंध होता है। जन्म के पूर्व रत्नों की वर्षा, जन्म के समय भी रत्नों की वर्षा, थोड़ी नहीं करोड़ों रत्नों की वर्षा एक बार में होती है। यह एक आश्चर्यजनक कार्य है। जिसको जितना मिलता है वह सब अपना ही किया हुआ मिलता है। हमें अपने किये हुए के बारे में सोचें। दुनिया के द्वारा हमें फल नहीं मिलता है। हमें अपने किये हुए का ही फल मिलता है। कर्म का बीज हमें जो मिला है, उसी के अनुसार ही तो फल हमें मिलता है। हमारा बीज जैसा होता है वैसा ही फल हमें मिलता है। इसीलिए हमें कर्म के बीज को समझना चाहिए। दुनिया के फल की अपेक्षा न करके दुनिया में रहते हुए अपने कर्म फल की ओर दृष्टि होनी चाहिए। अभिषेक के लिये कोई सागर का जल नहीं, क्षीर समुद्र से जल लाया गया था। कहते हैं वह क्षीरसागर का जल जो ढाई द्वीप से बाहर है, जिसमें जलचर एवं त्रसजीव ही नहीं होते उस जल से तीर्थंकर बालक का जन्माभिषेक किया गया था। उस बालक में ऐसी कौन सी शक्ति है? वह दिखे, न दिखे, लेकिन उसकी महिमा तो चारों तरफ दिखाई देती है। सभी देव उसकी सेवा करना चाहते हैं, उसकी भारती के अनुसार ही उसका महोत्सव मनाते हैं।

कल एक व्यक्ति आया था। उसने कहा महाराज आज गर्भस्थ शिशु का परीक्षण होता है यह नहीं होना चाहिए, इसे रोकना चाहिए, इसके बारे आज कार्य नहीं हो रहा है। हमें उस व्यक्ति की पहचान करना चाहिए लेकिन शिशु के पहचान की बात का हेतु क्या है? इसमें एक कारण है, यदि लड़का होता है, तो उसकी सोच अलग होती है, यदि लड़की होती है तो उसको नहीं चाहते हैं, उसका गर्भपात आज किया जा रहा है। हम जिनेन्द्र भगवान के उपासक हैं और सोचना चाहिए, एक जीव की हत्या क्या उचित है? आज सरकार की ओर से प्रतिबंध होते हुए भी आज बहुत हो रहा है और विज्ञापनों के साथ किया जा रहा है। यह सब क्या है? यह सब व्यक्ति के स्वार्थ का अतिरेक है। आज व्यक्ति कर्त्तव्य दृष्टि से ऊपर उठ रहा है। यदि इसी प्रकार कार्य होता रहा तो व्यक्ति की संवेदनाएँ ही समाप्त हो जायेंगी। हमें इस संदर्भ में पक्षपात से ऊपर उठ कर सोचने की आवश्यकता है। अपनी मनुष्यता का परिचय इस कार्य को रोकने से देना है। हम जन्म कल्याणक तो बहुत मनाते हैं, लेकिन यह नियम नहीं लेते जिसकी आवश्यकता है। हम गर्भपात जैसे कार्य को न करायेंगे, न ही इसका समर्थन करेंगे, यह नियम लें।

यह जीवन कैसा है? तो एक प्रभात की लाली होती है, और संध्या की भी लाली होती है। यह जीवन भी प्रभात एवं संध्या की लाली के समान होता है। एक के आने से वैभव बढ़ता जाता है, और एक आने से वैभव मिटता जाता है। हमें जिनभारती को समझना है उसे पढ़ना चाहिए। यदि एक व्यक्ति का पतन होता है, तो बहुत से व्यक्तियों के लिये पतन का कारण बन जाता है, यदि एक का उत्थान होता है, तो वह असंख्यात जीवों के उत्थान के लिये कारण बन सकता है। जो व्यक्ति परमार्थ को प्राप्त कर लेता है, अर्थ तो उसके चरणों में आकर बैठ जाता है। वह कहीं पर भी रहे, अर्थ उसके पीछे-पीछे चलता है। लेकिन जो व्यक्ति परमार्थ को छोड़कर अर्थ के पीछे दौड़ता है तो भवनों में बैठा हुआ है, वहाँ पर भी अशान्ति का अनुभव करता है। यदि कोई पुण्य शाली व्यक्ति का जन्म जंगल में हुआ है, और उसकी माँ का मरण हो गया, वहाँ पर उसका कोई नहीं है, तो वहाँ पर भी उसकी रक्षा करने वाले आ जाते हैं। उसके पुण्योदय से मारक तत्त्व भी साधक तत्त्व बनकर उसकी रक्षा करते हैं। इसलिये हमें यह नहीं सोचना है कि उसका पालन पोषण कैसे होगा? वह तो अपना पुण्य लेकर आता है। उसके अनुसार वह सब कुछ पाता है। हम उस जीव के मारक तत्त्व बनकर उसके जीवन का संहार करने लगें यह ठीक नहीं है। हमारे लिये राम, हनुमान, प्रद्युम्न के जीवन को देखना चाहिए, पढ़ना चाहिए, उनका जीवन कैसा था? उनका पुण्य था, इसलिये जंगल में भी उनका संरक्षण हुआ। एक हम है, जीवों के संरक्षण की बात तो नहीं करते, लेकिन आज संज्ञी पंचेन्द्रिय जीवों का

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चिकित्सालय में भ्रूण परीक्षण कराके गर्भपात जैसा जघन्य अपराध किया जा रहा है, इसके लिये अपनी आवाज अपने मुख से नहीं निकाल कर अपना मौन समर्थन करते जा रहे हैं, जो ठीक नहीं है।

आज हमें जिनेन्द्र भगवान के जीवन को देखने की आवश्यकता है। उनके जैसा हम आज नहीं बन सकते, कोई बात नहीं, उनके जैसा बनने की भावना तो कर सकते हैं। हम उनके जीवन को शास्त्रों के माध्यम से जानें और उनके बताये मार्ग को तो धारण कर सकते हैं और हम भी परम्परा से उस जिनत्व को एक दिन पा सकते हैं। लेकिन यह संसारी प्राणी, तेल-नोन, लकड़ी में फँसा रहता है, उसके संग्रह के लोभ में फँसा रहता है, इसलिये जिनत्व की महिमा को नहीं जान पाता है। आप लोगों की भी वही दशा है। कैसी दशा है? जैसे एक पीपल का पत्ता है, थोड़ी सी हवा लगती है तो वह डोलता रहता है। घड़ी के पेंडुलम की तरह कभी इधर, कभी उधर और पकने के बाद वह गिर जाता है, वैसे आप लोगों की दशा है कर्मों के कारण है, कर्मों का एक झौंका लगा, आप कभी छपारा में गिरे, कभी जबलपुर या सिवनी आदि-आदि स्थानों में आकर गिरते रहे। यह आज की परम्परा नहीं, अनादिकाल से इन कर्मों के झौंकों को खाते आये हो और आगे कितने खाना है, यह तो केवल केवली भगवान ही जान सकते हैं। हम अपनी भीतरी शाश्वत सत्ता को जानें, अपने आत्मतत्त्व के बारे में सोचें, अपने आत्म कल्याण के बारे में सोचना प्रारंभ कर दें। कल का कोई पता नहीं क्या होने वाला है? हम अपनी आत्मसत्ता का ज्ञान नहीं होने के कारण हम पंचेन्द्रिय के विषयों की ओर जा रहे हैं। यहाँ कोई किसी के लिये नहीं जी रहा, सब अपने-अपने स्वार्थ को देखते हैं। इस पंचकल्याणक में पाँच दिन हैं, दो दिन तो राग रंग के है, जिनसे हमारा वास्ता नहीं, लेकिन कल से वीतरागता की बात होगी। कल से हम जैसा कहेंगे वैसा होगा, अब तीन दिन तो वीतरागता के वातावरण को बनाने वाले हैं रागमय दृष्टि को हटाकर वीतरागमय दृष्टि को लाना है। वीतरागमय दृष्टि रखने से ही वैराग्य का जन्म होता है। ऐसे वीतराग धर्म की शरण में रहकर वैराग्य को अपने जीवन में लायें, इस भावना के साथ महावीर भगवान की जय।

प्रस्तुति : मुनि श्री अजितसागर

छात्रावास में वर्णीजी

डॉ. श्रीमती रमा जैन

जब श्री गणेश प्रसाद जी वर्णी छात्रावास में जयपुर में पढ़ते थे, तब एक हृदयविदारक अनहोनी घटना घटी। उस घटना से वे तनिक भी विचलित नहीं हुए, आनन्दित हुए। घटना वर्णी जी के ही मुखारविन्द से-

विवाह के पश्चात् मैं श्री जमुनाप्रसाद जी काला की कृपा से जयपुर राज्य के प्रमुख विद्वान् पं. श्री वीरेश्वर शास्त्री के पास पढ़ने लगा था। अध्ययन के लिये सभी प्रकार की सुविधाएँ वहाँ मुझे उपलब्ध थीं। वहीं थोड़ी दूर पर 'श्री नेकर जी' की दूकान थी। उनकी दूकान का कलाकन्द भारत में बहुत प्रसिद्ध था। मेरा मन भी उसे खाने का हो गया। मैंने एक पाव कलाकन्द खरीद कर खाया, तो मुझे अत्यंत स्वाद आया। रोज खाने का मन करने लगा। मैं बारह महीने जयपुर में रहा, परन्तु एक दिन भी बिना खाये नहीं रहा। त्यागने की बात मन में आती, पर मैं स्वाद के लोभ में त्याग न कर सका। मैं अपने निकटस्थ भाई बहिनों से निवेदन करता हूँ कि वे ऐसी प्रकृति न बनावें, जो कष्ट उठाने पर भी उसे त्याग न सकें। जयपुर छोड़ने के बाद ही मेरी वह आदत छूट सकी।

जयपुर में मैंने बारह माह रहकर पं. श्री वीरेश्वर जी शास्त्री से कातन्त्र व्याकरण का अभ्यास किया था। श्री चन्द्रप्रभुचरित एवं तत्त्वार्थसूत्र का भी अभ्यास किया था। इतना पढ़ कर मैं बम्बई बोर्ड की परीक्षा में बैठ गया। जब मैं कातन्त्र व्याकरण का प्रश्नपत्र लिख रहा था, तब एक पत्र मेरे गाँव से आया। उसमें लिखा था कि 'तुम्हारी पत्नी का देहावसान हो गया।'

मैंने मन ही मन कहा - हे प्रभो! आज मैं बन्धन से मुक्त हो गया। यद्यपि मैं अनेक बन्धनों का पात्र था, परन्तु यह बन्धन ऐसा था, जिससे मनुष्य को अपनी सब सुधबुध भूल जाती है। उसी दिन मैंने बाईजी को सिमरा एक पत्र लिख दिया, कि अब मैं निःशल्य होकर विद्याध्ययन करूँगा। ('जीवनयात्रा' पृ. 30-31 से साभार)

विद्यार्थी भवन, बेनीगंज, छतरपुर, (म.प्र.)

राजुल-गीत

श्रीपाल जैन 'दिवा'

सखी री वे आये क्यों द्वार?
सखी री वे आये क्यों द्वार?
सज-धज कर आये बसंत वे आ बन गये पतझर।
उपवन नयन बिछाये बैठा, मधुप विमुख भय खार।
कंजकली भावना समाकुल, प्राणों का सत सार।
प्राणों की विनिमय बेला में, कैसे दिया बिसार।
शून्य चूमते सपन हृदय पर, शून्य किया संसार।
पौरुष का विजयी सेहरा सिर, विजय कहूँ या हार।

राजुल अन्तर आँख जगी।
सखी री अन्तर आँख जगी।
वाह्यनाद ने अलख जगाई, सुन करुणा की पगी।
बलि-वैभव-ढँका अनहद पर, गहरी चोट लगी।
जग वैभव से विरत हुआ मन, परा नार नित सगी।
स्वयं आपको निहरे निर्भय समता आँख लगी।
अभय पुरुष को कहाँ आज तक, भय की प्रीत लगी।
हृदय शून्य सम व्यापक पसरा, आतम मुक्त खगी।

शाकाहार सदन
एल-75, केशर कुंज, हर्षवर्धन नगर, भोपाल-3

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

'जैन तत्त्वविद्या' के प्रणेता मुनि श्री प्रमाणसागर जी

प्राचार्य निहालचंद जैन

जैन तत्त्वविद्या जैन दर्शन के साहित्याकाश में एक 'ध्रुव' नक्षत्र के भाँति प्रकट होकर ज्ञानरश्मियों के प्रभामण्डल से दीप्त है। यह कृति, जैनागम के चार अनुयोग ग्रंन्थों का सारभूत संस्कृत भाषा के दो सौ सूत्रों की व्याख्या या भाष्य है, जो आधुनिक भाषा शैली में प्रांसगिक सन्दर्भो का एक प्रामाणिक ग्रन्थ बन गया है। 'जैन तत्त्वविद्या' के प्रणयन का मूलस्रोत, आचार्य माघनन्दि योगीन्द्र द्वारा रचित 'शास्त्रसार समुच्चय' है, जिसमें प्रथमानुयोग, द्रव्यानुयोग, चरणानुयोग और करणानुयोग रूप जैनदर्शन की विषयवस्तु को संस्कृत के सूत्रों में निबद्ध किया गया है।

मुनि श्री प्रमाणसागर जी द्वारा उक्त सूत्रों की न केवल सुबोध हृदयग्राही आख्या प्रस्तुत की गयी है, वरन् उन्हें विषय-उपशीर्षकों में वर्गीकृत कर संयोजित किया गया है। जैसे प्रथमानुयोग वेदरत्न के अंतर्गत बाईस सूत्रों को चार उपशीर्षकों (1) कालचक्र (2) तीर्थंकर (3) चक्रवर्ती और (4) अन्य महापुरुष में विभाजित किया गया है। दूसरा करणानुयोग वेद रूप द्वितीय अध्याय के चवालिस सूत्रों को आठ उपशीर्षकों (1) लोक सामान्य (2) अधोलोक (3) मध्यलोक (4) ऊर्ध्वलोक (5) से 8 भवनवासी व्यन्तर, ज्योतिष्क और वैमानिक देव में विभाजित है। तीसरे चरणानुयोग वेद के अड़सठ सूत्र तेरह उपबन्धों में - सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान, सम्यक्चारित्र, श्रावकाचार, बारहव्रत, श्रावक के अन्य कर्त्तव्य आदि में विभाजित है। अंतिम चौथे द्रव्यानुयोग वेद के छयासठ सूत्र सत्रह विषयानुक्रमण शीर्षकों में विभाजित हैं।

मुनि श्री प्रमाणसागर जी जैनागम के ऐसे सत्यान्वेषी दिगम्बर संत हैं, जिनकी दैनिकचर्या का बहुभाग-अध्ययन/मनन/चिन्तन/शोधपरक सृजन के लिये समर्पित रहता है। 'जैनधर्म और दर्शन' आपकी प्रथम बहुचर्चित मौलिक कृति ने जहाँ आपके लेखकीय-कर्म को स्वयं के नाम की सार्थकता से जोड़ दिया है, वहीं 'जैन तत्त्वविद्या' ने आगम के समुन्दर को बूँद में समाहित करने का भागीरथी प्रयास किया है। इन दोनों कृतियों ने पूर्व की अध्यात्म-संस्कृति को आधुनिक वैज्ञानिक संस्कृति से जोड़ने का एक अभिनव कार्य किया है।

मुनि श्री प्रमाणसागर जी महाराज, जैनागम के आलोकलोक के ध्रुव-नक्षत्र, संत शिरोमणि आचार्य श्री विद्यासागर जी महाराज के प्रज्ञावान शिष्यों में से एक हैं। अपनी अल्पवय में ज्ञान और वैराग्य के प्रशस्त-पथानुगामी बन अन्तर्यात्रा का जो आत्म-पुरुषार्ष सहेजा है, उससे आपके व्यक्तित्व की अनेक विधाएँ प्रस्फुटित हुई हैं।

(क) आपकी चिन्तनशीलता, वैज्ञानिक एवं शोधपरक है- इसका ठोस प्रमाण आपकी प्रस्तुत कृति 'जैन तत्त्वविद्या' है, जिसमें आपने कर्मसिद्धान्त के विषय को करणानुयोग के अन्तर्गत न मानकर द्रव्यानुयोग का विषय माना है। इसके समर्थन में आपका वैज्ञानिक तथ्य तर्कपूर्ण है। कर्म पुद्गल द्रव्य है। अस्तु कर्म की समस्त प्रक्रियाएँ द्रव्यानुयोग के अन्तर्गत ली जानी चाहिए तथा करण का अर्थ होता है परिणाम। अस्तु, करणानुयोग के अन्तर्गत जीव के अवस्थान रूप

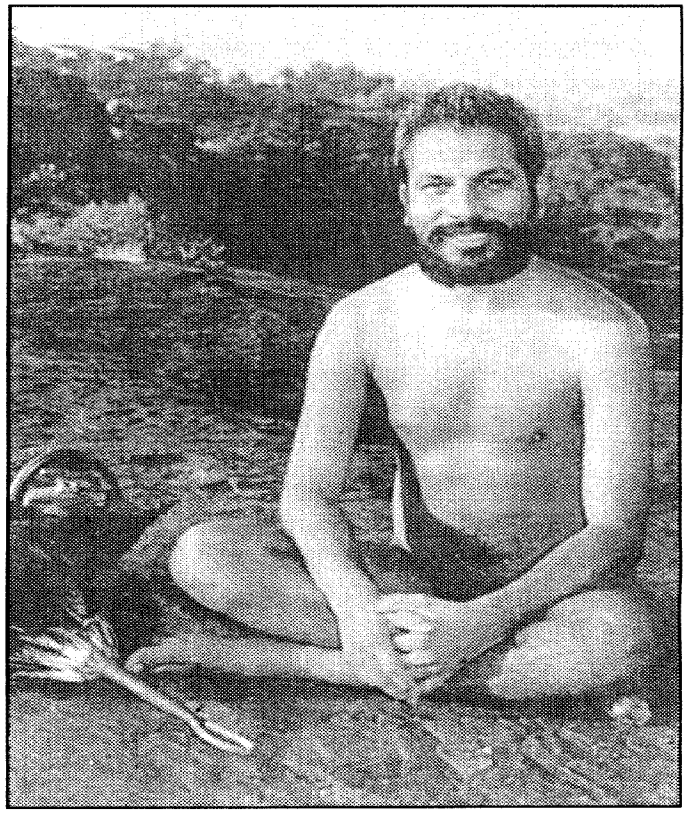

चतुर्गति का वर्णन पढ़ने से परिणामों में एकाग्रता रूप ध्यान से निर्मलता आती है।

(ख) आपकी भाषा शैली प्रवाहमयी एवं सुगम है। कहीं भी आगमिक पारिभाषिक शब्द दुरूह नहीं लगते। सरल, सुबोध और संक्षिप्तता आपकी लेखन-शैली की एक पहचान बन गयी है। विस्तृत विषयवस्तु को एक/दो वाक्यों में सुस्पष्ट कर देना मुनिश्री का लेखन श्रेयस है। ऐसी प्रभावक लेखन-शैली का उद्भव तभी होता है, जब लेखक अपने चिन्तन को मंथन प्रक्रिया के द्वारा प्राञ्जल विचारों का नवनीत प्राप्त करने में सक्षम हो जाता है। उसके मानस में भ्रम और भ्रान्तियों के लिए कोई जगह नहीं होती। ऐसे लेखक की कलम की नोंक से जो प्रसूत होता है, वह सरल अभिव्यक्ति बन जाता है।

(ग) जैन तत्त्वविद्या का प्रणेता/कृतिकार न केवल लेखक है, परन्तु पहले एक संत है एक निष्काम, दिगम्बर जैन साधु है। लेखक संत के वीतरागी व्यक्तित्व के साथ एक दार्शनिक है। जैन न्यायविद् वास्तुविद्या का पारखी और ज्योतिषशास्त्रों का ज्ञाता है। यही कारण है कि 'जैनधर्म और दर्शन', 'दिव्य जीवन का द्वार', 'अन्तस की आँखें' जैसी महत्त्वपूर्ण कृतियों की कड़ी में एक और महत्त्वपूर्ण अवदान जैन साहित्य के क्षेत्र में जुड़ गया है जैन तत्त्वविद्या के प्रणयन से जिसमें आपकी तत्त्वान्वेषी वैज्ञानिकता और जिनवाणी की सफल प्रस्तुत मुखर हुई है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(घ) लेखकीय कर्म के साथ ज्ञान की अभिव्यक्ति आपके धारावाही प्रवचन में देखने को मिलती है। वाणी में जहाँ ओजस्वी-गुण है, वहीं सम्मोहकता का जादू भी है। श्रोता ऐसा खिंचा हुआ बैठा रहता है जैसे उसका हृदय ही बोल रहा हो। बोलते हुये मुख की मुस्कान सोने में सुहाग की उक्ति चरितार्थ करती है। मुनिश्री के प्रवचन चाहे व्यस्त शहर के चौराहों पर हों या जेल के अन्दर, चाहे मन्दिर के विशाल सभागार में हों या जैन महोत्सवों के विशाल पाण्डाल में, सभी जगह प्रवचन में एक तत्त्व सर्वव्याप्त रहता है - 'वशीकरण' का। प्रवचन में शब्द सौष्ठव की वासंती छटा और विषय का सहज प्रस्तुतीकरण संगीत सा माधुर्य उत्पन्न कर देता है।

(ङ) मुनिश्री के वात्सल्यमय व्यवहार और छोटे-बड़े सभी से सरलता और मुस्कान के साथ मिलना आपके व्यक्तित्व की एक ऐसी छवि है, जो आपमें सहज है। जब ज्ञान की तेजस्विता अंहकार के हिम को पिघलाकर गलित कर देती है, तो ऐसी विनम्रता का सहज स्फुरण होने लगता है। हिन्दी, संस्कृत, प्राकृत, अँग्रेजी भाषाविद् आप जैन साहित्य दर्शन/इतिहास के तलस्पर्शी अध्येता हैं। ज्ञान-ध्यान और तप की प्राञ्जलसाधना के प्रखर निर्ग्रन्थ साधु हैं। भगवान महावीर और गौतम बुद्ध की अध्यात्म संस्कृति से सनी बिहार भूमि के इतिहास की झलक आपके व्यक्तित्व से झरने की तरह प्रवाहित होती हुई आपके बिहार प्रान्तवासी होने का स्वत: सिद्ध प्रमाण है।

एक लम्बी प्रतीक्षा के बाद भारतीय ज्ञानपीठ दिल्ली से ऐसा प्रकाशन हुआ, जिसने अनेक आगम ग्रंन्थों के सारभूत को एक ग्रन्थ में समाहित कर गागर में सागर भरकर शोधार्थी पाठकों को ऐसा अमृतोपम उपहार भेंट किया है।

इस ग्रंथ का वाचन तत्त्वार्थसूत्र की भाँति किया जाये, जो स्वाध्याय तप और कर्म निर्जरा का उपादन बने। सम्पूर्ण जैनागम का पारायण दो सौ संस्कृत सूत्रों में निबद्ध कर देना आचार्य माघनन्दी योगीन्द्र का श्रेयस तो है ही, साथ ही मुनि प्रमाणसागर जी महाराज के परम अभीक्ष्ण ज्ञान का परचम भी है जिन्होंने इस ग्रन्थ को अमर बना दिया।

जैन तत्त्वविद्या मुनि प्रमाणसागर जी के भास्वर ज्ञान का एक चिन्मय अर्घ्य है या कहें कि उनके अभीक्ष्ण ज्ञानोपयोग का मूर्त रूपायन है। कृति 'जैन तत्त्वविद्या' मुनि प्रमाणसागर जी की तप तेजस्विता का एक महामाष्य है।

स्वाध्याय के सातत्य का यह प्रखर-निमित्त बने, इस पुण्य प्रशस्तभावना एवं लोक मंगल कामना के साथ कृतिकार मुनिश्री को लेखक की विनम्र प्रणामाञ्जलि है।

शा.उ.मा. विद्यालय के सामने
बीना (म.प्र.)

अतिशय क्षेत्र डेरापहाड़ी पर जैन पाठशाला की तीसरी शाखा प्रारंभ

छतरपुर। पूज्य मुनिश्री प्रशांतसागरजी एवं मुनि श्री निर्वेग-सागरजी की मंगल प्रेरणा एवं सान्निध्य में रविवार को प्रसिद्ध जैन अतिशय क्षेत्र डेरापहाड़ी पर आचार्य श्री विद्यासागर जैन पाठशाला की तीसरी शाखा का भव्य शुभारंभ गरिमामय समारोह में हुआ। इसके पूर्व पाठशालाओं के बच्चों ने प्रात: भगवान बाहुबली हाल में सामूहिक पूजन किया तथा अपराहण में पूज्य मुनिद्वय के मंगल प्रवचन हुए।

पूज्य मुनि श्री प्रशांतसागरजी ने अपने प्रवचन में कहा कि वर्तमान समय में चारों ओर ज्ञान बढ़ रहा है, लेकिन आज जो ज्ञान उपलब्ध है, वह कितना सार्थक है? आज के ज्ञान में संस्कारों तथा धार्मिक ज्ञान का सर्वथा अभाव है। आज प्रारंभ हो रही इस पाठशाला में बच्चों को मात्र ज्ञान नहीं वरन् जीवन मूल्य तथा संस्कार भी दिये जायेंगे, जो घरों में संभव नहीं हैं। पूज्य मुनि श्री निर्वेगसागरजी ने अपने प्रवचन में कहा कि संसार में जो अज्ञान फैला है, वह एक व्यक्ति के पुरुषार्थ से मिटाया नहीं जा सकता, फिर भी प्रत्येक व्यक्ति को अपने स्तर पर अपना कर्तव्य पालन करना चाहिये। पाठशाला की उपयोगिता स्पष्ट करते हुए मुनि श्री ने धार्मिक शिक्षा को वर्तमान परिप्रेक्ष्य में और भी जरूरी बताया और कहा कि जिनवाणी का अल्पज्ञान भी आत्मकल्याण में सहायक होता है।

इस अवसर पर कार्यक्रम का संचालन कर रहे पाठशाला के संयोजक डॉ. सुमति प्रकाश जैन, संचालिका कु. ज्योति जैन एवं सहयोगी कु. श्वेता जैन ने पाठशाला के उद्देश्यों एवं नियमों पर प्रकाश डालते हुए धर्मप्रेमी बंधुओं से अपने बच्चों को पाठशाला में भेजने की अपील की।

डॉ. सुमति प्रकाश जैन, संयोजक
कु. श्वेता जैन, शिक्षिका, जैन पाठशाला, डेरापहाड़ी

भगवान महावीर स्वामी पार्क नामकरण

पूज्य गणिनी प्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी के ससंघ सान्निध्य में पहाड़गंज मन्टोला क्षेत्र, दिल्ली में रामाकृष्ण मिशन के पास स्थित दिल्ली नगर निगम के एक पार्क का नाम "भगवान महावीर स्वामी पार्क" रखा गया। 24 जनवरी 2002 को भगवान महावीर के 2600वें जन्मकल्याणक महोत्सव वर्ष के अंतर्गत आयोजित इस नामकरण कार्यक्रम की अध्यक्षता निगम पार्षद श्रीमती सुधा शर्मा ने की, जिनके समर्पित प्रयासों से यह कार्य सम्भव हो सका।

इस अवसर पर सभा को सम्बोधित करते हुए प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका श्री चंदनामति माताजी ने कहा कि इस पार्क में भगवान महावीर के जीवन एवं शिक्षाओं से संबंधित एक शिलालेख लगवाया जाना चाहिये। श्रीमती सुधा शर्मा ने कहा कि भगवान महावीर मात्र जैनों के ही नहीं थे, वरन् सम्पूर्ण विश्व के थे। गणिनी प्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी ने कहा कि इस पार्क में भगवान महावीर की एक मूर्ति स्थापित की जावे, जो समस्त जनों को मैत्री, सौहार्द, पारस्परिक प्रेम एवं सुख-शांति का निरंतर पाठ पढ़ायेगी।

ब्र. कु. स्वाति जैन, संघस्थ

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

9 मार्च 2002 प्रथम पुण्यतिथि पर विशेष आलेख

कर्त्तव्यनिष्ठा के जागरूक प्रहरी डॉ. पन्नालाल जी साहित्याचार्य

ब्र. त्रिलोक जैन

घटनाओं का चक्र घूमता, हमें घुमाया करता है
सुख-दुख की आँख मिचौली के, वह दृश्य दिखाया करता है॥
कहीं जलें खुशियों के दीपक, और जन्म के गीत बजें।
कहीं गमों का क्रन्दन है, और वियोग के साज सजें॥

संसार का अटल नियम है। वर्तमान कितना भी सुन्दर हो, उसे इतिहास के पन्नों में सिमटना ही पड़ता है। उत्पाद का व्यय और व्यय का उत्पाद संसार चक्र की मजबूरी है, पर आत्मा की अमरता शाश्वत है। न वह मरती है, न जन्मती है, और न ही जवान होती है, न बूढ़ी। ये तो सब पर्यायें हैं, पर इनमें मनुष्य पर्याय का अपना अलग महत्त्व है। मनुष्य तो धरती पर बहुत हैं पर कितने हैं जो धरती के शृंगार और मानवता के हार हैं। किसी ने ठीक ही कहा है कि 'आदमियों के जंगल में वन तो बस वीरान है, भीड़ है मनुष्यों की, पर बहुत कम इंसान हैं' लाखों बच्चे रोज पैदा होते हैं और लाखों मनुष्य रोज मर जाते हैं। जन्म के समय प्रायः हर घर में खुशी मनाई जाती है, चाहे वह घर गरीब व्यक्ति का ही क्यों न हो। कुछ नहीं तो माता बहिनें थाली बजा कर ही खुशियाँ मना लेती हैं। संयोग के गीत सदा सुहाने लगते हैं, पर संयोग में ही वियोग की पीड़ा छिपी रहती है।

माँ जानकीदेवी की गोद एवं पिता श्री गल्लीलाल के घर आँगन में पले बड़े श्रद्धेय पंडित जी की नश्वर देह आज हमारे बीच में नहीं है। ज्ञान की आँच में पकी पंडित जी की आत्मा अमर लोक में ठहर गई। लेकिन वर्णी गुरुकुल, जबलपुर में जो ज्ञान ज्योति प्रज्वलित की, उसका प्रकाश आज भी जीवंत है, और आगे भी रहेगा। यही पंडित जी के जीवन की साधना है। यही दिव्य प्रकाश, उनके जीवन को चरितार्थता प्रदान करता है। ज्ञान की आग में जलकर कोई सूरज बने न बने, दीपक तो अवश्य बन जाता है। यह तो सर्वविदित ही है कि पारगुंवा का पन्ना और सागर का लाल 'पन्नालाल' श्रद्धेय पं. जी ने वर्णी जी की असीम अनुकंपा एवं सतत ज्ञानाराधना लक्ष्य के प्रति एक निष्ठ साधना के बल पर जीवन में उस ऊँचाई को पाया, जो अहं शून्य थी। सब कुछ पाकर भी वे मौन थे, शायद इसीलिए आप जैन जगत के गौरव के रूप में जाने गये। आपने शिक्षादान के क्षेत्र में एक विशिष्ट स्थान प्राप्त किया, जिसके फलस्वरूप भारत के राष्ट्रपति महोदय श्री वी.वी. गिरी ने आपको सम्मानित कर गौरव का अनुभव किया। आपने जीवन में कई संस्थाओं के उच्च पदों पर बैठ कर समाज सेवा के महान् कार्य किये हैं। स्मृतियों के आलोक में आपके जीवन पर दृष्टिपात करता हूँ तो याद आते हैं वो जीवन्त क्षण, जो पंडित जी को विस्मृतियों की नगरी में भी जीवन्त रखते हैं।

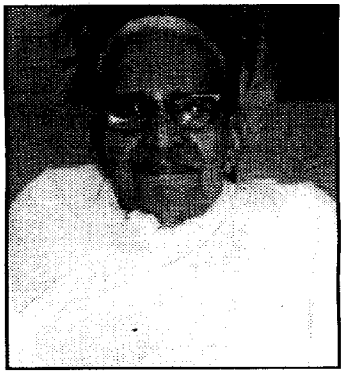

एक रात ब्रह्मचारी भाई विमल जी एवं सुरेन्द्र जी पंडित जी के सेवा कर रहे थे, उसी समय मैं पहुँचा, पंडित जी को प्रणाम करके बैठ गया। तभी पंडित जी ने मेरी ओर देखा - कौन त्रिलोकचंद जी बैठ जाओ। पंडित जी को देखता रहा, तभी अचानक मेरे मुख से निकला- पंडित जी आपको अपना बचपन याद है, सुनकर वे मुस्करा उठे। बचपन किसको याद नहीं होता। बचपन तो फटे कपड़ों में भी बादशाह होता है, गिरने में भी उठने का आनंद होता है।

एक दिन आम के पेड़ के नीचे खेलते समय एक आम मिला, दौड़ कर माँ को दिखाया। अम्मा-अम्मा हमें आम मिला। माँ काम में लगी थी, सुनकर बोली अच्छा, राजा बेटा- आम रख दो। एक आम और मिल जाये तो दोनों भाई मिलकर खा लेना। स्मृतियों के नंदनवन में खोये पंडित जी इतने भावुक हो गये कि अतीत आँसुओं का निर्झर वन दोनों गालों पर बह चला। सुनकर सहज ही माता जी के प्रति पंडित जी का मन श्रद्धा भाव से भर गया। ठीक ही है सदाचरण, नीतिनिष्ठा एवं कर्त्तव्यनिष्ठा की जो शिक्षा एक माँ दे सकती है, उस शिक्षा का एक अंश भी विश्व के सभी विश्वविद्यालय मिल कर नहीं दे सकते। पंडित जी कुछ ठहर कर अपने आँसुओं को पोंछते हुए बोले महामारी के क्रूर कराल जबड़ों ने बचपन में पिता का साया छीन लिया, पर माँ के धैर्य ने मामा के सहारे, सागर में जीवन को गतिशील किया और यहीं पूज्य वर्णी जी कृपा का प्रसाद मिला। जो आज आप लोग पा रहे हो। बोलते-बोलते पंडित जी उठ कर बैठ गये और बोले- दिन चले जाते हैं, समय गुजर जाता है, परन्तु मन पर स्मृतियों की छाप अमिट रहती है। खैर, अब आप लोग भी विश्राम करो और पंडित जी सोने से पूर्व 'नित्याप्रकंपा..... ऋद्धि' मंत्र का पाठ करने लगे। पर क्या करें, प्रातः उठकर सुप्रभात स्तोत्र, स्वयंभू स्तोत्र, भक्तामर स्तोत्र व सहस्रनाम स्तोत्र से पिसनहारी पर्वतांचल में वर्णी गुरुकुल

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

के परिसर को गुंजायमान करने वाला कंठ अब मौन हो गया है, भक्ति रस में झूमता हाथ, अब आँखों से ओझल हो गया है। जिस व्हील चेयर पर मंदिर आते-जाते मंद-मंद मुस्कराते श्रद्धेय गुरुवर ने अंतिम दिन तक देवपूजा, सामायिक, स्वाध्याय आदि करके गुरु मिलन की आकांक्षा में कुंडलपुर पहुँचे, वह आज सूनी पड़ी है।

पंडित जी उस मेंढ़क की भाँति थे जो कमल के फूल की पाँखुरी मुँह में दबा कर भगवान् महावीर स्वामी के समवशरण में प्रभुदर्शन की चाह में जाता हुआ रास्ते में ही हाथी के पाँव के नीचे दब कर मरा और अमर अर्थात् देव हो गया। ठीक इसी प्रकार बड़े बाबा एवं छोटे बाबा (आचार्य श्री विद्यासागर) की दर्शन की लालसा लिये पंडित जी कुण्डलपुर सिद्धक्षेत्र पहुँचे, पर श्वासों की डोर पर उनका बस न चला और भोर होने से पहले ही अज्ञान के अंधेरे में ज्ञान का प्रकाश बिखेरने वाला दिवाकर, सूरज के आने के पूर्व ही प्रभु और गुरु मिलन की चाह का दिव्य उजाला लिये हम सबको पीड़ा के सागर में डुबो गया। लेकिन ध्यान रहे, ज्ञान कभी मरता नहीं है। पंडित जी का ज्ञान जैन पुराणों के आकाश में दिव्य सूर्य की तरह चमकता रहेगा।

वियोग के इन क्षणों में पंडित जी के साथ बिताये संयोग के अमूल्य क्षणों के प्रकाश में आज भी साफ-साफ देख रहा हूँ कि साँज भ्रमण कर लौट रहा था, पंडित जी के पास पहुँचा तो देखा एक हाथ टेबिल पर रखा, एक हाथ में कलम लिये अपनी ग्रीवा से लगाये आकाश की ओर देख रहे हैं और आँखों से बहे करुणा बिन्दु गालों पर दिव्य मोतियों की तरह चमक रहे हैं। मेरी आहट पा विचार लोक से लौटे और चौंकते हुये बोले - आओ भैया, कहकर पेन नीचे रख दिया। मैंने चरणस्पर्श कर प्रणाम किया और पूछ लिया- आँखों से गंगा-जमुना बहने का कारण? तो वे बोले- एक छोटा लड़का आया था, बहुत देर तक खड़ा-खड़ा रोटी माँगता रहा और रोटी हमारे पास थी नहीं। पंडित जी ने आँसू पोंछते हुये कहा- भइया, किसी को गरीबी न मिले। चलो, मंदिर चलें। यह उनके संवेदनशील जीवन की करुणामयी कहानी है।

सन् 1988 की बात है, जब पंडित जी मढ़िया जी के 44 नम्बर कमरे में रहते थे। परमपूज्य आचार्य श्री विद्यासागर जी ससंघ, गुरुकुल भवन में विराजमान थे। सुबह आहार-चर्या के लिए मुनि संघ सामने स्थित महावीर जिनालय से निकलता था। पं. जी के कमरे के सामने श्रावकगण पड़गाहन के लिए खड़े होते और आचार्यश्री के निकलते ही 'स्वामी! नमोस्तु-नमोस्तु' से आकाश गुंजा देते। पं. जी प्रतिदिन अपना स्टूल सरका कर दरवाजे पर बैठ जाते और आहारचर्या देखते, यह नित्य क्रम था। पर एक दिन विचार किया कि साधु घर के सामने से निकलते हैं। और शरीर की असमर्थता के कारण पड़गाहन में खड़े नहीं हो पाते। पंडित जी इतने विह्वल हुये कि तुरंत शहर में रिश्तेदारों को फोन करवाया और सागर से अपनी धर्मपत्नी सुन्दरबाई जी को बुलवाया और दूसरे दिन स्वयं शुद्ध वस्त्र पहनकर असमर्थता के बावजूद बेंत के सहारे पड़गाहन के लिए खड़े हुए और मुनिराज को आहार दान देकर ही संतोष की साँस ली। ऐसी थी, पंडित जी की गुरुभक्ति और कर्त्तव्यनिष्ठा। कर्त्तव्यनिष्ठा के आलोक में पंडित जी का जीवन इतना समयपाबंद था कि उनकी दैनिकचर्या से लोग अपनी घड़ी मिला लिया करते थे।

एक दोपहर घड़ी ने जैसे बारह बजाये, मैं अपने विद्यार्थी साथियों के साथ क्लास में पहुँचा। पंडित जी को प्रणाम किया और सभी ब्रह्मचारी भाई बैठ गये। पंडित जी का स्वास्थ्य कुछ ठीक नहीं दिख रहा था, मैंने पूछा पंडित जी आपका स्वास्थ्य तो ठीक है? पंडित जी बोले आज बुखार सा लग रहा है और देखा तो पंडित जी को बुखार था। हम लोग पंडित जी को लिटा कर सेवा उपरांत अपने कक्षों में चले गये। कोई 10 मिनट के बाद पंडित जी ने घंटी बजाई और हम लोग दौड़ कर पंडित जी के पास पहुँचे और प्रणाम करके पूछा- पंडित जी साब कुछ जरूरत है? पंडित जी इसके उत्तर में जो बोले वह भारत के हर शिक्षक को सुने जैसा है। पंडित जी बोले- पूर्व पर्याय में जाने कौन से पाप किये थे कि आज तनख्वाह लेकर धर्म पढ़ाना पड़ रहा है और अपने कर्त्तव्य में आज प्रमाद करोगे तो फिर जाने आगे हमारा क्या होगा। इसके बाद पंडित जी ने वेतन लेने का त्याग कर दिया।

पिछले दो-तीन वर्षों में पंडित जी को लगातार बैठने में पीड़ा होती थी, फिर भी वे 4-6 घंटे प्रतिदिन पढ़ते-पढ़ाते रहते थे। आपके संपूर्ण जीवन पर दृष्टिपात करने पर ज्ञात होता है कि आप कर्त्तव्यनिष्ठा के जागरूक प्रहरी थे और अपने कर्त्तव्यों के प्रति सदैव सजग रहते थे। आपके ऊपर कोई अधिकारी नहीं था जो आपकी ड्यूटी को देखता, फिर भी आप प्रतिदिन अपनी दैनन्दिनी लिखते थे कि आज कितने शिष्य पढ़ाये और कितना पाठ चला।

श्रद्धेय पंडित जी की धर्मपत्नी सुन्दरबाई जी एक दिन आम के वृक्ष के नीचे बैठी गुरुकुल की ओर देख रही थी। मैंने बाई जी को प्रणाम कर कहा- क्या सोच रही हो, बाईजी? तब वे बोलीं क्या करें, सुबह पंडित जी को भोजन करा दो, दोपहर में एक गिलास पानी और संध्या को जलपान दे दो, बाकी समय दिवालों से बातें करते रहो। मैं सुनकर हँस दिया और कहा- बाई जी जिनवाणी की सेवा हो रही है, पुण्य आपको भी मिलेगा। सन् 1989 में बाई जी के मरणोपरांत पंडित जी ने सुनाया था कि सागर में आचार्य श्री शान्तिसागर जी ने एकपत्नीव्रत पर व्याख्यान दिया, सुनकर हमने हाथ उठा दिया। बाद में मित्रों ने हास्य किया, यदि पत्नी मर गयी तो क्या करोगे। पंडित जी बोले अब तो नियम ले लिया बाईजी ने हमारा खूब साथ निभाया। उल्लेखनीय है कि बाईजी ने पंडित जी की साहित्य साधना, धर्म साधना एवं सामाजिक कार्यों में उनका कदम से कदम मिलाकर परछाई की तरह साथ दिया। यह उनका अप्रत्यक्षरूप से अतिमहत्वपूर्ण योगदान था।

आपके विषय में कहा जाता है कि आप अजातशत्रु थे। आपका कोई शत्रु न था। आप समाज में सर्वमान्य रहे। आपके तेज बोल कभी किसी ने नहीं सुने, पर मुझे आपको कठोर रूप का सामना करना पड़ा। बात 1991 की है। मैं पर्वराज पर्युषण में डिण्डोरी जाने की तैयारी कर रहा था। मुझे दोपहर 1 बजे निकलना था, रात्रि 4 बजे से अपना टेप चालू किया और अपने शास्त्र संग्रह को व्यवस्थित करना

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

शुरू किया। कुछ लेखों के कागज व्यवस्थित किये। इस काम में मुझे सुबह के सात बज गये, पर काम पूरा न हुआ। पंडित जी अपने आवश्यक कार्य पूर्ण कर मंदिर जी चले गये। प्रात: 10 बजे पंडित जी प्रवचन उपरांत जब लौटे तो मैं भी पूजा उपरांत पुन: टेप चालू कर फिर अपने काम में लग गया। पंडित जी भोजन कर लेट गये और मैं भोजन करने गया। आहार उपरांत फिर टेप चालू किया और अपना बैग लगाकर लेट गया। अब समय पंडित जी के सामायिक का था। वे 11.30 बजे से 12.30 तक सामायिक करते थे। सामायिक उपरांत पंडित जी अपनी व्हीलचेयर चलाते हुये मेरे कमरे तक आये, टेप चल रहा था, मुझे हल्की सी नींद सी आ रही थी, पर पंडित जी की आवाज सुनकर घबड़ा कर उठा और नीची गर्दन कर खड़ा हो गया। पंडित जी के शब्द थे- त्रिलोक जी यहाँ और भी लोग रहते हैं, कुछ ख्याल है? इतना कह कर वह शान्त हो गये। मैंने उन्हें व्हीलचेयर पर उनके कक्ष तक छोड़ दिया। पंडित जी के चरण छुए और आत्मग्लानि से भरा मैं सामायिक करने बैठ गया। सामायिक कर एक बजे उठा और पंडित जी को प्रणाम कर उनसे डिण्डोरी जाने की आज्ञा माँगी। वे प्रसन्न भाव से बोले अच्छा भैया! जाओ, खूब धर्म की प्रभावना करो। मैं आश्चर्यचकित था। अभी कुछ ही मिनिट पहले पंडित जी का जो रूप था, उसका एक अंश भी चेहरे पर नहीं था और न ही वचनों में। वे बिलकुल सहज थे मानों कह रहे हों सुख से जाओ, सुरक्षित आओ। आज 'अच्छा भैया! आ गये,' कह कर मुस्कराने वाला चेहरा चिर निंद्रा में सो गया है।

पंडित जी साब से मेरा प्रथम साक्षात्कार अतिशय क्षेत्र थूवोन जी में हुआ था। उन्हें लेकर कुछ ब्रह्मचारी भाई पाण्डाल से सीढ़ी से उतर रहे थे। अचानक मैंने उनका हाथ पकड़ लिया और पंडित जी के हाथ में हृदय धड़कता सा पाया। हम सभी उन्हें आचार्यश्री के कक्ष तक ले गये। शाम को आचार्य भक्ति के बाद गुरुदेव से जबलपुर गुरुकुल जाने के निर्देश मिले। यहाँ आकर स्वास्थ्य की अनुकूलता न होने के कारण ठीक से अध्ययन नहीं कर पाया और न ही गुरुकुल के नियमों का भली प्रकार पालन कर पाया। जब मैं अपनी त्रुटियों पर विचार करता हूँ तो मुझे लगता है कि मेरे जैसा छात्र एक दिन भी यहाँ रहने लायक नहीं था। लेकिन पंडित जी की अनुभवी पारखी आँखों ने मुझे कभी उपेक्षित नहीं किया। हमेशा सभाओं में मुझे बुलवाते और भरपूर प्रोत्साहन देते रहे। अन्त में यही भावना है कि आप जैसी सरलता, कर्त्तव्यनिष्ठा के आलोक में, माँ जिनवाणी की आराधना करते हुये परमपूज्य गुरुदेव विद्यासागर जी की चरण छाँव में आधिव्याधि-उपाधि से रहित समाधि को प्राप्त करूँ।

श्री वर्णी दिगम्बर जैन गुरुकुल
जबलपुर

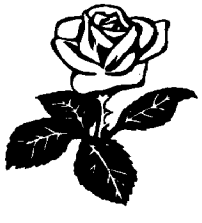

पद्मश्री पंडिता सुमतिबाई शहा का 90वाँ जयन्ती महोत्सव सम्पन्न

दि. 6.1.2002 को मंगलाचरण रूप में पं. महावीर शास्त्री के तत्त्वावधान में भक्तामर विधान सम्पन्न हुआ।

दि. 9 जनवरी 2002 को 90वाँ जयन्ती महोत्सव मनाया गया। प्रमुख अतिथि के रूप में वैधानिक विकास मंडल के अध्यक्ष मा.ना. श्री मधुकरराव चव्हाण उपस्थित थे।

इसी अवसर पर 'प्रबोधनांजली' पुस्तिका का विमोचन हुआ। पुस्तिका के लेखक श्री लालचंद हरिश्चंद्र मानवत का सत्कार किया गया।

इस पुस्तिका में मराठी और हिन्दी भाषा में शताधिक ऐसे प्रेरक प्रसंगों को संकलित किया गया है, जो मानव के हृदय को कुछ संस्कारित कर सकेंगे। शब्दांकन में ललित, सुसंवाद किया है।

अतिथि भाषण में मा.ना. श्री मधुकरराव चव्हाण ने कहा कि पद्मश्री पंडिता सुमतिबाई शहा का कार्य सामाजिक, धार्मिक और शैक्षणिक क्षेत्र में महान है। इसका ही फल है कि श्राविकाश्रम सोलापुर में अनेक संस्थाएँ कार्यरत हैं। हमें उनसे प्रेरणा लेकर आगे बढ़ना है। उनका स्टेच्यू संस्था में विराजमान होने के लिये मेरा पूरा सहयोग रहेगा। स्व. माताश्री के सेवा से ऋणमुक्त होने का अच्छा सुअवसर मुझे प्राप्त होने का गौरव है।'

पू. माताजी के जयंती उपलक्ष्य में संस्था की ओर से हृदयरोग निदान शिविर तथा रक्तदान शिविर का भी आयोजन किया गया। श्राविका संस्थानगर के विभागीय 5/6 संकुलों का स्नेह सम्मेलन धूमधाम से मनाने से सप्ताह में स्व. सुमतीबाई जी के परोक्ष आशीर्वाद से आनंदोत्सव जैसा वातावरण बना हुआ था।

ब्र. विद्युल्लता शहा
संचालिका, श्राविका संस्थानगर, सोलापूर

8वां प्रतिभा सम्मान समारोह

वर्ष 2001 की प्राथमिक शालेय स्तर से लेकर महाविद्यालयीन स्तर तक की परीक्षाओं में 75 प्रतिशत से अधिक अंक अर्जित कर उत्तीर्ण करने वाले 60 छात्र/छात्राओं को पंचायत सभा के पदाधिकारियों एवं सदस्यों के अलावा दानदाताओं द्वारा मैडल, प्रशंसा पत्र और पुस्तकें प्रदान की गईं। इसके साथ ही साथ खो-खो के खेल में प्रादेशिक एवं राष्ट्रीय स्तर पर ख्याति अर्जित करने पर कु. सोनल जैन एवं कु. अंजना जैन, शहर जिला युवक कांग्रेस में उपाध्यक्ष के पद पर मनोनीत राहुल जैन एवं युवक कांग्रेस के महामंत्री सुबोध जैन एवं म.प्र. क्रिकेट टीम में सबसे कम आयु में कप्तान बनने पर मयंक जैन को भी सम्मानित किया गया। इस कार्यक्रम में वर्ष 2001 में दयोदय तीर्थ तिलवाराघाट में पूज्य आचार्य श्री विद्यासागर जी के चातुर्मास को सानंद सम्पन्न कराने के लिये उक्त संस्था के 23 ट्रस्टियों को भी सम्मानित किया गया।

कमल कुमार, महामंत्री

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

नारीलोक

ब्रह्मचारिणी पण्डिता चन्दाबाई जी

डॉ. आराधना जैन 'स्वतन्त्र'

बीसवीं सदी में नारी जागरण की प्रथम अग्रदूत के रूप में ब्रह्मचारिणी पण्डिता चन्दाबाई प्रख्यात हुई हैं। उन्होंने समाज में व्याप्त कुरीतियों का विरोध किया, ज्ञानदीप प्रज्वलित कर नारी को कर्त्तव्य का बोध कराया एवं शिक्षा के क्षेत्र में उसे आगे बढ़ाया। आज हर क्षेत्र में जैन नारी की जो अग्रणी भूमिका दिखाई देती है वह उनकी ही देन है। इनका जन्म वृन्दावन में वैष्णव परिवार में वि.सं. 1946 अषाढ़ शुक्ल तृतीया को हुआ था। पिता श्री नारायण दास अग्रवाल सम्पन्न जमींदार, प्रतिभाशाली एवं ग्रेज्युएट विद्वान थे और माता थीं श्रीमती राधिका देवी। अपनी पुत्री के सौम्य मुख और गंभीर आकृति को देखकर उसका नाम चंदाबाई रखा। इनके दो भ्राता थे। श्री जमनाप्रसादजी एवं श्री जशेन्द्रु-प्रसादजी और दो अनुजाएँ थीं- केशरदेवी व ब्रजवालादेवी।

शिक्षा

पाँच वर्ष की अवस्था में गणेश पूजन के साथ अ, आ, इ, ई..., क, ख, ग, घ के उच्चारणपूर्वक चंदाबाई का विद्यासंस्कार संपन्न हुआ। विद्यालय में आरंभिक शिक्षा प्राप्त की। विशेष प्रतिभाशाली होने के कारण गुरुजन उन्हें सरस्वती का अवतार मानते थे। आरंभिक शिक्षा के साथ गीता और रामायण भी पढ़ी तथा घर-गृहस्थी के कार्यों में निपुण हुईं।

वैवाहिक जीवन

लगभग ग्यारह वर्ष की आयु में चंदाबाई आरा निवासी, सम्भ्रांत प्रसिद्ध जमींदार, जैन धर्मानुयायी पं. श्री प्रभुदास जी के पौत्र, श्री बाबू चंद्रकुमार जी के पुत्र श्री बाबू धर्मकुमार जी की सहधर्मिणी बन गईं।

विवाह के एक वर्ष बाद ही चंदाबाई जी के जीवन में एक वज्रपात हुआ जब शिखरजी-यात्रा से लौटते समय धर्मकुमारजी गिरीडीह में प्लेग से आक्रांत हो गये और कुछ समय में ही मृत्यु ने उनका आलिंगन कर लिया।

जीवन में मोड़

असमय में पति के निधन की घटना से बारह वर्षीया चंदाबाई को संयोगों की क्षणभंगुरतारूप, जीवन के सत्य पहलू का बोध हो गया। उन्होंने मोहशृंखला को तोड़ दिया। पितृतुल्य ज्येष्ठ श्री देवकुमारजी ने अपनी अनुज-वधू चंदाबाई को आरा बुलवा लिया। यहाँ पर उनकी ज्ञान वर्षा और पूज्य वर्णी श्री नमिसागरजी के धर्मोपदेश से वे पुन: ज्ञानार्जन में प्रवृत्त हुईं। उन्होंने जैन संस्कृत साहित्य और धर्मशास्त्रों, रत्नकरण्डश्रावकाचार, तत्त्वार्थसूत्र, द्रव्यसंग्रह, परीक्षामुख, न्यायदीपिका, चंद्रप्रभचरित आदि का अध्ययन पूज्य वर्णीजी के सान्निध्य में किया। काशी के समान संस्कृत शिक्षा केन्द्र, वृंदावन में कुछ समय रहकर लघु सिद्धांत कौमुदी, सिद्धांत कौमुदी आदि व्याकरण ग्रंथों का अध्ययन किया। राजकीय संस्कृत कालेज काशी की पंडित परीक्षा उत्तीर्ण की जो आज की शास्त्री परीक्षा के समकक्ष है। उनके जैन धर्म, दर्शन न्याय के प्रखर पांडित्य और विलक्षण प्रतिभा के आगे बड़े-बड़े विद्वान भी मूक हो जाते थे।

प्रतिज्ञा

गहन अध्ययन के परिणामस्वरूप चंदाबाईजी के हृदय में ज्ञानदीप प्रज्वलित हो गया। उन्होंने निश्चय कर लिया कि "अब मैं सेवा के क्षेत्र में पदार्पण कर असहाय, विधवा नारी जाति को सांत्वना देते हुए उनकी हर तरह से मदद करती रहूँगी।"

सेवा कार्य

प्रतिज्ञा को कार्यरूप देने के लिये आपने श्री देवकुमारजी को प्रेरित कर अपने ही नगर में सन् 1907 में कन्या पाठशाला की स्थापना करायी। वे स्वयं देख-रेख और अध्यापन कार्य करने लगीं। वेदना-संतप्त नारीजगत् की अज्ञानता को दूर करने के लिये उन्होंने सेवा के विभिन्न मार्गों को अपनाया, समस्त आर्यावर्त को कार्य क्षेत्र बनाया। उन्होंने नारी जाति को पढ़ाया, आगे बढ़ाया। अनेक पंचकल्याणक प्रतिष्ठाओं में सम्मिलित होकर अनेक यात्राओं के दौरान भाषण एवम् प्रवचन द्वारा महिलाओं को उनके कर्त्तव्य का बोध कराया, संगठित किया।

देश सेवा

स्वतंत्रता आंदोलन में चंदाबाईजी की महत्त्वपूर्ण भूमिका रही। वे स्वयं जेल नहीं गयीं, पर अपने भाइयों को स्वतंत्रता आंदोलन हेतु प्रेरित किया। अहिंसा, सत्य सिद्धांतों के प्रचार के लिये निबंध/लेख लिखकर वितरित किये और जन-जन के हृदय में देशभक्ति/सेवा की भावना जाग्रत की। कांग्रेस तथा देश के विभिन्न कार्यों के लिये चंदा एकत्रित किया। सन् 1920 से निरंतर चरखा चलाती रहीं। विदेशी वस्तुओं का बहिष्कार किया तथा आजीवन खादी ही धारण की।

धार्मिक क्षेत्र में योगदान

जन्म से ही धार्मिक संस्कारों से सम्पन्न चंदाबाईजी की धार्मिक कार्यों - पूजनपाठ, प्रतिष्ठा महोत्सव आदि में अग्रणी भूमिका रही। उन्होंने श्री देवकुमारजी व परिवार के सदस्यों के साथ दक्षिण भारत के तीर्थों की यात्रा की। वहाँ अनेक स्थानों पर पुरुषों में श्री देवकुमारजी ने तथा महिलाओं में चंदाबाईजी ने भाषण, प्रवचन द्वारा धर्मप्रभावना की। उनके प्रवचनों का कन्नड़ अनुवाद श्री नेमिसागरजी वर्णी करते थे।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

"निष्काम जिनभक्ति से बढ़कर अन्य कोई पुण्य का कार्य नहीं है" इसका अनुभव कर उन्होंने जिन मंदिर का निर्माण एवं अनेक जिनबिम्बों की प्रतिष्ठा करायी, जिनमें प्रमुख हैं - (1) राजगृह में द्वितीय पर्वत के समीप की जमीन खरीदकर पर्वत पर भव्य जिनमंदिर का निर्माण कराया और सन् 1936 में पंचकल्याणक प्रतिष्ठा करायी। (2) आरा में 40 शिखरबंद जिनालय होते हुए भी मानस्तम्भ की कमी थी। अतएव माँ श्री ने सन् 1939 में संगमरमर का भव्य रमणीय मानस्तम्भ तैयार कराया। उनकी ही प्रेरणा से उनकी ननद श्रीमती नेमिसुंदरजी ने जैन बाला विश्राम के विद्यालय भवन के ऊपर भव्य जिन मंदिर का निर्माण कराया। ऑरा के अनेकों मंदिरों के जीर्णोद्धार भी उनकी प्रेरणा से हुए।

साहित्य साधना

मा. श्री चंदाबाईजी विदुषी, प्रभावी प्रवचनकार एवं वक्ता होने के साथ श्रेष्ठ लेखिका, कहानीकार, कवयित्री, संपादिका व पत्रकार भी रहीं। उन्होंने महिलोपयोगी साहित्य का सृजन किया। उनके द्वारा लिखित प्रमुख निबंधसंग्रह/कृतियाँ हैं:-

(1) उपदेश रत्नमाला - इनमें दो भागों में 30 निबंधों का संकलन है।

(2) सौभाग्य रत्नमाला - यह नौ निबंधों का संग्रह है।

(3) निबंध रत्नमाला - यह 18 निबंधों का संकलन है।

(4) आदर्श निबंध - इसमें निबंधों की संख्या 30 है।

(5) निबंध दर्पण - इसमें लगभग 25/35 निबंध हैं।

(6) आदर्श कहानियाँ।

लेखन के साथ-साथ भा.दि. जैन महिला परिषद् द्वारा संचालित "जैन महिला-दर्श" मासिकपत्र का संपादन सन् 1921 से आजीवन किया। उनके जैन व जैनेतर पत्रों एवं अभिनंदन ग्रंथों में भी अनेक साहित्यिक, आचरणात्मक, दार्शनिक, उपदेशात्मक आलेख प्रकाशित हुए हैं।

माँ. श्री में बचपन से कवित्व का गुण था। उन्होंने संस्कृत व हिन्दी में अनेक कविताओं का सृजन किया है। इनमें काव्यत्व की अपेक्षा उपदेश अधिक है।

कलाप्रियता

सर्वगुण सम्पन्न चंदाबाईजी कलाविद् भी थीं। जैन आगम के अनुसार रत्नागिरि पर्वत पर जिनालय में कलश, मेहराब, जालियाँ, झरोखे का निर्माण कराना, ध्रुव-धान्य, जन-लय नंद आदि 16 प्रकार के प्रासादों को जानकारी होना, बारह दोषों से रहित तीर्थंकरों की दिव्यमूर्तियाँ स्थापित कराना, मानस्तम्भ में उत्कीर्ण 8 मूर्तियाँ तथा ऊपर की गुमटी में स्थित मनोज्ञ मूर्तियाँ उनकी कला मर्मज्ञता का प्रमाण है। चित्रकला में माँ श्री का अद्वितीय स्थान है। वे यद्यपि तूलिका लेकर चित्रों में रंग नहीं भरतीं थी तथापि पूजन, विधान, विशेष पूजापाठों के अवसर पर सुंदर मांडना पूरना, उसमें यथोचित रंगचूर्ण भरना आदि कार्य उनकी चित्रकलाप्रियता के द्योतक हैं। सन् 1950 में धर्मामृत के चित्र बनाने पधारे प्रसिद्ध चित्रकार श्री दिनेश बख्शी को माँ श्री ने चित्रकला के संबंध में विशेष परामर्श दिये थे। संगीतकला को तो माँ श्री क्रियाविशालपूर्व के अंतर्गत मानती थीं। उनके भक्तिविभोर होकर पूजन पढ़ने पर हृदय के तार झंकृत हो जाते थे। वे बालाविश्राम की छात्राओं को गरबा नृत्य, संथाली नृत्य, शंकर नृत्य, लोक नृत्य हेतु प्रोत्साहित करती थीं। काव्य कलाविद तो वे थी हीं।

महत्त्वपूर्ण स्मरणीय कार्य

जब हरिजन मंदिर प्रवेश बिल लेकर समाज में हलचल मची तो आचार्य श्री शांतिसागरजी ने अन्न त्याग कर दिया। तब उनकी ही शिष्या चंदाबाई जी ने लेखन द्वारा तथा अन्य विद्वानों के साथ अनेक बार दिल्ली जाकर राष्ट्रपति डॉ. राजेन्द्र प्रसाद और प्रधानमंत्री पं. जवाहरलाल नेहरू से भेंट की। उन्हें जैन धर्म की वस्तु स्थिति से अवगत कराया। जिससे प्रभावित हो हरिजन मंदिर प्रवेश बिल से जैन मंदिर पृथक कर दिये गये।

जैन बाला विश्राम

सन् 1921 में श्री सम्मेदशिखर की यात्रा चंदाबाई ने सपरिवार की। समग्र पर्वत की वंदना के उपरान्त श्री पार्श्वप्रभु की टोंक पर श्री बाबू निर्मलकुमारजी की प्रेरणा से एक वर्ष में जैन महिलाश्रम की स्थापना का नियम लिया। स्व. बापू धर्मकुमार जी की स्मृति स्वरूप आरानगर से दो मील दूर धर्मकुंज के भव्य भवन में जैन बाला विश्राम की स्थापना की और परिजनों के सहयोग से विद्यालय भवन व चैत्यालय का निर्माण कराया। यह लौकिक व धार्मिक शिक्षा का केन्द्र तथा भारतवर्ष में नारी जागरण का अद्वितीय प्रतीक है।

सम्मान

अ.भा.दि. जैन महिला परिषद् ने ब्र.पं. चंदाबाई अभिनन्दन ग्रंथ प्रकाशित कराया और यह स्वतंत्र देश के प्रथम राष्ट्रपति डॉ. राजेन्द्रप्रसादजी द्वारा आपको समर्पित किया गया।

संयम के पथ पर

सन् 1906 से ही चंदाबाईजी दैनिक षट्कर्मों का पालन करती रही थीं। सन् 1934 में आचार्य श्री शांतिसागरजी से उदयपुर (आडग्राम) में कार्तिक शुक्ल पूर्णिमा को प्रातः नौ बजे सातवीं प्रतिमा के व्रत ग्रहण किये। आचार्य श्री शांतिसागर जी छाणी और पू. गणेशप्रसादजी वर्णी इनके प्रेरणा स्रोत थे। मुख पर साधना की रेखा गंभीर आँखों से सब कुछ भूलकर सेवा करने की निश्छल साध, जीवन का कर्ममय फैलाव और वस्त्र में सादगी, माथे में आगमपुराण, ज्ञान-विज्ञान और हृदय में वात्सल्य का सागर, प्रेरणाओं का एक बंडल, एकांत की गायिका और बिहार की महान नारी श्री चंदाबाई जी ने 28 जुलाई 1977 को संसार से सदा के लिये विदा ले ली।

नारी अभ्युत्थान के लिए वे आश्रम की संस्थापिका, संचालिका, अध्यापिका, व्याख्याता, कुशल सेविका, लेखिका, कवयित्री और सफल सम्पादिका के रूप में सदैव स्मरणीय रहेंगी।

मील रोड, गंजबासौदा म.प्र.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अहिंसा की वैज्ञानिकता एवं उन्नति के उपाय

अजित जैन 'जलज' एम.एस-सी.

महावीर, अहिंसा और जैनधर्म तीनों एक-दूसरे से इतने अभिन्न रूप से जुड़े हुए हैं कि किसी एक के बिना अन्य की कल्पना करना भी मुश्किल लगता है। अत: महावीर स्वामी के 2000वें जन्मोत्सव पर जैनधर्म की उन्नति हेतु अहिंसा की वैज्ञानिकता सिद्ध करना सर्वाधिक सामयिक प्रतीत होता है। स्वामी विवेकानन्द, महात्मा गाँधी जैसे महामनीषी भी धर्म और विज्ञान के प्रबल पक्षधर रहे हैं।

जैन धर्म में अहिंसा का विशद् विवेचन किया गया है तथा वर्तमान विज्ञान के आलोक में एक ओर जहाँ अहिंसक आहार में अपराध, खाद्य-समस्या, जल-समस्या और रोगों का निदान दिखायी देता है, वहीं दूसरी ओर अहिंसा के द्वारा जैव-विविधता-संरक्षण एवं कीड़ों का महत्त्व भी दृष्टिगोचर होता है।

इस प्रकार अहिंसा की जीव वैज्ञानिक आवश्यकता का अनुभव होने पर अहिंसा हेतु विभिन्न वैज्ञानिक उपाय, वृक्ष खेती, ऋषि-कृषि, समुद्री खेती, मशरूम खेती, जन्तु विच्छेदन विकल्प, अहिंसक उत्पाद विक्रय केन्द्र, इत्यादि हमारे सामने आते हैं।

यह सब देखने पर भारत के कतिपय वैज्ञानिकों के इस विचार की पुष्टि होती है कि "आधुनिक विज्ञान का आधार बनाने में प्राचीन भारत का अमूल्य योगदान रहा है।" इसके साथ प्रसिद्ध गाँधीवादी चिंतक स्व. श्री यशपाल जैन का अपने जीवनभर के अनुभवों का निचोड़, मुझको निम्नलिखित रूप में लिखने का औचित्य भी समझ में आता है कि "वर्तमान युग की सबसे बड़ी आवश्यकता विज्ञान और अध्यात्म के समन्वय की है।"

(क) अहिंसा का जैनधर्म में महत्त्व

जैनधर्म में जीवों का विस्तृत वर्गीकरण कर प्रत्येक जीव की सुरक्षा हेतु दिशा-निर्देश हर कहीं मिलते हैं। जैन शास्त्रों में, मांस के स्पर्श से भी हिंसा बतायी गयी है। त्रस हिंसा को तो बिल्कुल ही त्याज्य बताया है। निरर्थक स्थावर हिंसा भी त्याज्य बतायी गयी है। धर्मार्थ हिंसा, देवताओं के लिये हिंसा, अतिथि के लिये हिंसा, छोटे जीव के बदले बड़े जीवों की हिंसा। पापी को पाप से बचाने के लिये मारना, दुखी या सुखी को मारना, एक के वध में अनेक की रक्षा का विचार, समाधि में सिद्धि हेतु गुरु का शिरच्छेद, मोक्ष प्राप्ति के लिये हिंसा, भूखे को मांसदान इन सब हिंसाओं को हिंसा मानकर इनको त्यागने का निर्देश है और स्पष्ट कहा गया है कि जिनमतसेवी कभी हिंसा नहीं करते।

विज्ञान के आलोक में अहिंसा

(1) आहार और अपराध - सात्त्विक भोजन से मस्तिष्क में संदमक तंत्रिका संचारक (न्यूरो इनहीबीटरी ट्रान्समीटर्स) उत्पन्न होते हैं जिनसे मस्तिष्क शांत रहता है, वहीं असात्त्विक (प्रोटीन) मांस भोजन से मस्तिष्क में उत्तेजक तंत्रिका संचारक (न्यूरो एक्साइटेटरी ट्रान्समीटर्स) उत्पन्न होते हैं जिससे मस्तिष्क अशांत होता है।[1]

गाय, बकरी, भेड़ आदि शाकाहारी जन्तुओं में सिरोटोनिन की अधिकता के कारण ही उनमें शांत प्रवृत्तियाँ पायी जाती हैं, जबकि मांसाहारी जन्तुओं जैसे शेर आदि में सिरोटोनिन के अभाव से उनमें अधिक उत्तेजना, अशांति एवं चंचलता पायी जाती है।[2]

इसी परिप्रेक्ष्य में, सन् 1993 में जर्नल ऑफ क्रिमीनल जस्टिस एज्युकेशन में फ्लोरिडा स्टेट के अपराध विज्ञानी सी.रे. जैफ्फरी का वक्तव्य भी महत्त्वपूर्ण हो जाता है कि वजह चाहे कोई भी हो, मस्तिष्क में सिरोटोनिन का स्तर कम होते ही व्यक्ति आक्रामक और क्रूर हो जाता है। अभी हाल में शिकागो ट्रिब्यून में प्रकाशित अग्रलेख भी बताता है कि "मस्तिष्क में सिरोटोनिन की मात्रा में गिरावट आते ही हिंसक प्रवृत्ति में ऊफान आता है।[3]

यहाँ यह बताना उचित होगा कि मांस या प्रोटीनयुक्त भोज्य पदार्थों से, जिनमें ट्रिप्टोफेन नामक अमीनो अम्ल नहीं होता है, मस्तिष्क में सिरोटोनिन की कमी हो जाती है एवं उत्तेजक तंत्रिका संचारकों की वृद्धि हो जाती है। इसी से योरोप के विभिन्न उन्नत देशों में नींद न आने का एक प्रमुख कारण वहाँ के लोगों का मांसाहारी होना भी है।[4] उपरोक्त सिरोटोनिन एवं अन्य तंत्रिका संचारकों की क्रिया विधि पर काम करने पर श्री पॉल ग्रीन गार्ड को सन् 2000 का नोबल पुरस्कार भी प्राप्त हुआ है।[5]

(2) आहार और खाद्यान्न समस्या- वैज्ञानिकों का मानना है कि विश्व भर के खाद्य संकट से निपटने के लिये अगले 25 वर्षों में खाद्यान्न उपज को 50 प्रतिशत बढ़ाना होगा।[6]

इस समस्या का सुंदर समाधान अहिंसक आहार शाकाहार में ही सम्भव है। एक किलोग्राम जन्तु प्रोटीन (मांस) हेतु लगभग 8 कि.ग्रा. वनस्पति प्रोटीन की आवश्यकता होती है। सीधे वनस्पति उत्पादों का उपयोग करने पर मांसाहार की तुलना में सात गुना व्यक्तियों को पोषण प्रदान किया जा सकता है।[7]

किसी खाद्य शृंखला में प्रत्येक पोषक स्तर पर 90% ऊर्जा खर्च होकर मात्र 10 प्रतिशत ऊर्जा ही अगले पोषक स्तर तक पहुँच पाती है। पादप प्लवक, जन्तु प्लवक आदि से होते-होते मछली तक आने में ऊर्जा का बढ़ा भारी भाग नष्ट हो जाता है और ऐसे में एक चिंताजनक तथ्य यह है कि विश्व में पकड़ी जानेवाली मछलियों का एक चौथाई हिस्सा मांस उत्पादक जानवरों को खिला दिया जाता है।

इस प्रकार विकराल खाद्यान्न समस्या का एक प्रमुख कारण मांसाहार तथा एकमात्र समाधान शाकाहार ही है।

(3) आहार और जल समस्या - विश्व के करीब 1.2 अरब व्यक्ति साफ पीने योग्य पानी के अभाव में हैं। ऐसा अनुमान लगाया गया है कि वर्ष 2025 तक विश्व की करीब 2/3 आबादी पानी की समस्या से त्रस्त होगी। विश्व के 80 देशों में पानी की कमी है। इस समस्या के संदर्भ में "एक किलो ग्राम गेहूँ के लिये जहाँ मात्र 900 लीटर जल खर्च होता है वहीं गोमांस के उत्पादन में 1.00 लाख लीटर जल खर्च होता है।[8] तथ्य को ध्यान में रखने पर अहिंसक आहार शाकाहार द्वारा जल समस्या का समाधान भी दिखाई दे जाता है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(4) आहार और बीमारियाँ - विश्व स्वास्थ्य संगठन की बुलेटिन संख्या 637 के अनुसार मांस खाने से शरीर में लगभग 160 बीमारियाँ प्रविष्ट होती हैं।[9] शाकाहार विभिन्न व्याधियों से बचाता है। अधिकांश औषधियाँ वनस्पतियों से ही उत्पन्न होती हैं।

हरी सब्जियों में उपस्थित पोषक तत्त्व तथा विटामिन 'ई' एवं 'सी' प्रति आक्सीकारकों की तरह कार्य करते हैं। अल्सहाइमर रोग से बचाने में इन प्रति आक्सीकारकों की ही भूमिका होती है। शरीर से मुक्त मूलकों की सफाई में प्रति आक्सीकारक अपनी महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। मुक्त मूलक कैंसर सहित अनेक घातक रोगों के लिये उत्तरदायी होते हैं।[10]

(5) जैव विविधता संरक्षण और जीव दया - गत दो हजार वर्षों में लगभग 160 स्तनपायी जीव, 88 पक्षी प्रजातियाँ लुप्त हो चुकी हैं और वैज्ञानिक अनुमान के अनुसार आगामी 25 वर्षों में एक प्रजाति प्रति मिनिट की दर से विलुप्त हो जायेगी।[11]

विभिन्न खाद्य श्रृंखलाओं के द्वारा समस्त जीव-जन्तु एवं वनस्पति आपस में इस तरह से प्राकृतिक रूप से जुड़े हुए हैं कि किसी एक के श्रृंखला से हटने या लुप्त हो जाने से जो असंतुलन उत्पन्न होता है उसकी पूर्ति किसी अन्य के द्वारा असंभव हो जाती है। उदाहरणार्थ प्रति वर्ष हमारे देश में दस करोड़ मेंढक मारे जाते हैं। पिछले वर्ष पश्चिमी देशों को निर्यात करने के लिये एक हजार टन मेंढक मारे गये। यदि ये मेंढक मारे नहीं जाते तो प्रतिदिन एक हजार टन मच्छरों और फसलनाशी जीवों का सफाया करते।[12]

इस प्रकार से प्रकृति में हर जीव-जन्तु का अपना विशिष्ट जीव वैज्ञानिक महत्त्व है और मनुष्य जाति को स्वयं की रक्षा हेतु अन्य जीव-जन्तुओं को भी बचाना ही होगा, अहिंसा की धार्मिक भावना तथा वैज्ञानिकों की सलाह इस संबंध में एक समान है।

(6) कीटनाशक और कीड़ों का महत्त्व - प्रत्येक जीव की तरह कीड़ों का भी बहुत महत्त्व होता है। दुनिया के बहुतेरे फूलों के परागण में कीड़ों का मुख्य योगदान रहता है। अर्थात् पेड़-पौधों के बीज एवं फल बनाने में कीड़े महत्त्वपूर्ण कार्य करते हैं। अनेक शोधकर्ताओं ने यह पाया है कि जिस क्षेत्र में कीटनाशकों का अधिक उपयोग होता है वहाँ परागण कराने वाले कीड़ों की कमी हो जाती है और फसल की उपज पर इसका प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है।[13]

भारत में कीट पतंगों की 131 प्रजातियाँ संकटापन्न स्थिति में जी रही हैं। ऐसे में कीटनाशकों के बढ़ते उपयोग और उसके होने वाले दुष्प्रभावों से वैज्ञानिक भी चिंतित हो उठे हैं।[14]

विश्व में प्रतिवर्ष 20 लाख व्यक्ति कीटनाशी विषाक्तता से ग्रसित हो जाते हैं। जिनमें से लगभग 20 हजार की मृत्यु हो जाती है।[15] यही कारण है कि विश्व स्वास्थ्य संगठन ने 129 रसायनों को प्रतिबंधित घोषित कर रखा है।

कीटनाशक जहर जैसे होते हैं और ये खाद्य श्रृंखला में लगातार संगृहीत होकर बढ़ते जाते हैं। इस प्रक्रिया को जैव आवर्धन कहते हैं। उदाहरण के लिये प्रतिबंधित कीटनाशक डी.डी.टी. की मात्रा मछली में अपने परिवेश के पानी की तुलना में 10 लाख गुना अधिक हो सकती है और इन मछलियों को खाने वालों को स्वाभाविक रूप से अत्यधिक जहर की मात्रा निगलनी ही पड़ेगी। यहि प्रक्रिया अन्य मांस उत्पादों के साथ भी लागू होती है। खाद्यान्न की तुलना में, खाद्यान्न खाने वाले जन्तुओं के मांस में कई गुना कीटनाशक जमा रहेगा जो अंततः मांसाहारी को मारक सिद्ध होगा। अतएव कीड़ों का बचाव, कीटनाशकों का उपयोग रोकना अर्थात् अहिंसा का पालन वैज्ञानिक रूप से भी आवश्यक हो जाता है।

(7) प्राकृतिक आपदाएँ और हिंसा- प्रकृति अपने विरुद्ध चल रहे क्रियाकलापों को एक सीमा तक ही सहन करती है और उसके बाद अपनी प्रबल प्रतिक्रिया के द्वारा चेतावनी दे ही देती है। दिल्ली विश्वविद्यालय में भौतिकी के तीन प्राध्यापकों डॉ. मदनमोहन बजाज, डॉ. इब्राहीम तथा डॉ. विजयराज सिंह ने स्पष्ट गणितीय वैज्ञानिक गवेषणाओं द्वारा यह सिद्ध करने का प्रयास किया है कि दुनिया भर में होने वाली समस्त प्राकृतिक आपदाओं- सूखा, बाढ़, भूकम्प, चक्रवात का कारण हिंसा और हत्याएँ हैं।[16]

(ख) अहिंसा उन्नति के वैज्ञानिक उपाय

(1) वृक्ष खेती - अनेक वृक्षों के फल-फूलों के साथ उनके बीज भी अच्छे खाद्य हैं। उनका उत्पादन 10-15 टन प्रति हैक्टेयर प्रति वर्ष होता है जबकि कृषि से औसत उत्पादन 1.25 टन प्रति वर्ष ही है। वृक्ष खेती में किसी प्रकार के उर्वरक, सिंचाई, कीटनाशक की भी आवश्यकता नहीं होती।[17]

इस तरह से वृक्ष खेती के द्वारा खाद्यान्न समस्या और जल समस्या का और भी कारगर समाधान तो होता ही है, यह विधि अहिंसा से अधिक निकटता भी लाती है।

(2) ऋषि-कृषि - जापानी कृषि शास्त्री मासानोबू फ्युकुओका ने इस कृषि प्रणाली को जन्म दिया है। इसमें रासायनिक उर्वरकों, कीटनाशकों इत्यादि का बिल्कुल उपयोग नहीं किया जाता। यहाँ तक कि भूमि में हल भी नहीं चलाया जाता है। बीज यूँ ही बिखेर दिये जाते हैं। खरपतवारों को भी नष्ट नहीं किया जाता है। इस प्राकृतिक खेती द्वारा फ्युकुओका ने एक एकड़ भूमि से 5-6 टन धान उपजाकर पूरी दुनिया को चकित कर दिया है।[18]

अहिंसक खेती के प्रवर्तन पर इस जापानी महामना को मैगासे से पुरस्कार भी प्राप्त हो चुका है। प्रथम जैन तीर्थंकर आदिनाथ द्वारा प्रतिपादित "कृषि" की ही इस खोज (रि-सर्च) को बढ़ावा देना क्या हम अहिंसक अनुयायियों का कर्त्तव्य नहीं बनता है? और महावीर, अहिंसा अथवा आदिनाथ की पावन स्मृति में स्थापित कोई पुरस्कार, इस ऋषि तुल्य जापानी को नहीं दिया जाना चाहिये?

(3) समुद्री खेती - समुद्र की खाद्य श्रृंखला को देखने पर पता चलता है कि वहाँ पादप प्लवकों द्वारा संचित 31080 के.जे. ऊर्जा, बड़ी मछली तक आते-आते मात्र 126 के.जे. बचती है।[19] ऐसे में यह विचार स्वाभाविक रूप से उठता है कि क्यों ना भोजन के रूप में पादप प्लवकों का सीधे प्रयोग करके विशाल ऊर्जा क्षय को तो रोका ही जावे, हमारी खाद्य समस्या को भी सरलता से हल कर लिया जावे।

समुद्री शैवालों का विश्व में वार्षिक जल संवर्धन उत्पादन लगभग 6.5x 1,00,00000 टन है। जापान तथा प्रायद्वीपों सहित दूरस्थ पूर्वी देशों में इसके अधिकांश भाग का सब्जी के रूप में उपयोग किया जाता है। समुद्री घासों में प्रोटीन काफी मात्रा में पायी जाती है। इसमें पाये जानेवाले एमीनो अम्ल की तुलना सोयाबीन या अण्डा से की गई है।[20]

मेरे मत से तो मछली पालन के स्थान पर पादप प्लवक

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पल्लवन से अहिंसा, ऊर्जा एवं धन तीनों का संरक्षण किया जा सकता है।

(4) मशरूम खेती - फफूँद की एक किस्म मशरूम, प्राचीन समय से खायी जाती रही है। यदि मशरूम की खेती को प्रोत्साहित और प्रवर्धित किया जाये तो यह अण्डों का उत्तम विकल्प बन सकता है। चूँकि इसका पूरा भाग खाने योग्य होता है, अधिक भूमि की आवश्यकता नहीं होती है, रोशनी की अधिक आवश्यकता नहीं होती है, यह कूड़े-करकट पर उग सकता है तथा खनिजों का खजाना होता है इसलिये यह आम आदमी का उत्तम नाश्ता हो सकता है। मशरूम के प्रोटीन में सभी आवश्यक अमीनों अम्ल भी पाये जाते हैं जो इसे श्रेष्ठ आहार बनाते हैं।

(5) अहिंसक नव निर्माण - (क) ब्ल्यू क्रास ऑफ इंडिया (चेन्नई) ने काम्प्युफ्राग, काम्प्युरैट शीर्षकों से साफ्टवेयर विकसित किये हैं जिनके प्रयोग से देश की शिक्षण संस्थाओं में लाखों मेंढकों, चूहों की हिंसा को समाप्त किया जा सकता है।

(ख) ब्यूटी विदाउट क्रूयेल्टी पुणे ने लिस्ट ऑफ आनर के माध्यम से अहिंसक सौंदर्य प्रसाधनों की प्रामाणिक सूची प्रस्तुत की है। इस प्रकार के कार्य को और व्यापक बनाना चाहिये।

(ग) विभिन्न वैज्ञानिक जैव प्रौद्योगिकी द्वारा ऐसे बीज तैयार कर रहे हैं जिनसे वह कीट प्रतिरोधी पौध उत्पन्न करेंगे और इस तरह कीटनाशकों का प्रयोग बंद हो सकेगा।

(घ) विदेशों में अहिंसक उत्पाद विक्रय केन्द्र बॉडी शॉप खोले गये हैं। इस तरह के केन्द्र हमें अपने देश में नगर-नगर, डगर-डगर खोलने चाहिये।

(ड) अहिंसा शोध एवं प्रमाणन हेतु अहिंसक प्रयोगशालायें स्थापित होनी चाहिये।

अंत में, अहिंसा की विविध क्षेत्रों में वैज्ञानिक रूप से उपयोगिता, आवश्यकता को ध्यान में रखते हुए यह तथ्य स्पष्ट रूप से रेखांकित किया जा सकता है कि आज समग्र विश्व में विभिन्न वैज्ञानिक प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से अहिंसा को प्रोत्साहित कर रहे हैं और कर सकते हैं। परन्तु इस बात का अहसास स्वयं उन्हें भी नहीं है कि वे अहिंसा का कितना पुनीत धार्मिक कार्य कर रहे हैं।

कितना अच्छा हो कि अहिंसा की प्रतिमूर्ति जैनधर्म की कोई प्रतिनिधि संस्था अहिंसा के क्षेत्र में चल रहे विभिन्न वैज्ञानिक कार्यों पर नजर रखकर उनको संरक्षण, समन्वय तथा दिशा-निर्देशन दे तथा इन अहिंसक वीर वैज्ञानिकों के अनुसार विभिन्न अहिंसक कार्य योजनायें, विकल्प, संसाधन बनाये। अगर हम इस दिशा में कुछ भी कार्य कर सकें तो भगवान महावीर के 2600वें जन्मोत्सव वर्ष में उनके आदर्श अहिंसा को शक्तिशाली बना सकेंगे जिससे कि सुखी, संतुलित संसार का सृजन हो सकेगा।

आधार ग्रन्थ

1. वैज्ञानिक- जन. मार्च 91 पृ. 55
2. वही
3. आविष्कार- अगस्त 2000 पृ. 371
4. वैज्ञानिक- जन. मार्च 91 पृ. 55
5. विज्ञान प्रगति- जनवरी 2001 पृ. 38
6. विज्ञान प्रगति- फरवरी 2001 पृ. 12
7. इनवेन्सन इनटेलीजेंस फर. 95 पृ. 73
8. आविष्कार- जून 2000 पृ. 251
9. मांसाहार- सौ तथ्य पृ. 19
10. आविष्कार- अक्टूबर 2000 पृ. 19
11. विज्ञान प्रगति- अक्टूबर 99 पृ. 47
12. आविष्कार- जुलाई 2000 पृ. 322
13. विज्ञान प्रगति- अक्टूबर 99 पृ. 13
14. विज्ञान प्रगति- अक्टूबर 99 पृ. 47
15. आविष्कार- नवम्बर 99 पृ. 514
16. बॉयोलाजी 12 भाग 2 पृ. 963
17. सम्यक विकास- श्री सूरजमल जैन जुलाई-दिसम्बर 2000 पृ. 32
18. विज्ञान प्रगति- फरवरी 2000 पृ. 27
19. बायोलाजी II भाग-2 पृ. 317
20. विज्ञान प्रगति- जुलाई 2000 पृ. 55-52

महावीर

विनोद कुमार 'नयन'

●

दुखियों की देख पीर, आँखों में भर आया नीर,
छूटने का दुख से उपाय बतलाया था।
जन्म से भले हो शूद्र, कर्म से महान है जो,
ऐसे इन्सान को महान बतलाया था॥
खुद जियो और दूसरों को जीने दो जहाँ में यहाँ,
सब हैं बराबर, ये पाठ सिखलाया था।
धन्य हैं वे भगवान महावीर स्वामी जिन्हें,
सारी दुनिया ने अपना शीश झुकाया था॥

●

वीरन में वीर, अरु धीरन में धीर,
जन्म-जरा से छुड़ावे, ऐसो एक ही तू वीर है।
राग नहीं, द्वेष नहीं, मन में क्लेश नहीं,
वीतराग निर्विकार निर्मोही गंभीर है॥
पा न सकें पार तेरो, बड़े-बड़े जोधा जहाँ,
नश जात अभिमान देख तेरो धीर है।
तात सिद्धारथ को प्यारो, माता त्रिशला को दुलारो,
जग की आँखों को है तारो, ऐसो महावीर है॥

एल.आई.जी.-24,
ऐशबाग कालोनी, भोपाल म.प्र.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जिज्ञासा-समाधान

पं. रतनलाल बैनाड़ा

जिज्ञासा - क्या विद्या या मंत्र के द्वारा मँगाया गया आहार, दान देने योग्य है?

समाधान - श्री यशस्तिलकचम्पू में इस प्रकार कहा है -

ग्रामान्तरात्समानीतं मन्त्रानीतमुपायनम्।
न देयमापणक्रीतं विरुद्धं वाऽयथर्तुक्तम्।।749।।

अर्थ- जो दूसरे गाँव से लाया गया हो या मंत्र के द्वारा लाया गया हो या भेंट में आया हो या बाजार से खरीदा हो या ऋतु के प्रतिकूल हो, वह भोजन मुनि को नहीं देना चाहिए।

श्री व्रतोद्योतन श्रावकाचार में इस प्रकार कहा है -

शिल्पिविज्ञानिभिर्दत्तं दत्तं पाखण्डिभिस्तथा।
संबलोपायनग्राममंत्राकृष्टं च डंकितम्।।115।।

अर्थ - शिल्पी (बढ़ई,लुहार) आदि कलाविज्ञानी जनों के द्वारा दिया गया हो, मिथ्यात्वी पाखंडियों के द्वारा दिया गया हो, संबल (मार्ग पाथेय) उपायन (भेंट) और अन्य ग्राम से आया हो, मंत्र से आकर्षणकर मँगाया गया हो, डंकित (घुना) हो। ... ऐसा आहार श्रावक को मुनियों के लिये नहीं देना चाहिए।

श्री श्रावकाचारसारोद्धार में इस प्रकार लिखा है -

सावद्यं पुष्पितं मन्त्रानीतं सिद्धान्तदूषितम्।
उपायनीकृतं नान्नं मुनिभ्योऽत्र प्रदीयते।।338।।

अर्थ- सावद्य हो, पुष्पित हो, मंत्र से मँगाया गया हो, सिद्धान्त (आगम) से विरुद्ध हो, किसी के द्वारा भेंट किया गया हो, वह अन्न मुनियों के लिये नहीं दिया जाता है अर्थात् ऐसा अन्न अदेय है।

सारांश - उपर्युक्त सभी प्रमाणों से यह स्पष्ट होता है कि मंत्र या विद्याओं के द्वारा मँगाया गया आहार, दान में देने योग्य नहीं होता।

साधु एवं विद्वानों के मुख से सुने हुए प्रवचनों के अनुसार दान देने का अधिकारी भी वही व्यक्ति होता है, जो संयम ग्रहण करने की योग्यता रखता हो अर्थात् देव आदि के द्वारा दिया गया आहार भी साधु ग्रहण नहीं करते। यदि ग्रहण करने में आवे या बाद में ज्ञात हो तो प्रायश्चित लेकर उस दोष की शुद्धि करते हैं। जैसा कि सम्राट चन्द्रगुप्त के जीवन में मुनि बनने के बाद आहार का प्रसंग शास्त्रों में पढ़ने को आता है।

जिज्ञासा - मैं अभी तक अन्य देवों को पूजता था, परन्तु इस वर्ष चातुर्मास में जो प्रवचन सुने, उससे कुदेव पूजा का त्याग ले लिया है। अब जो मूर्ति या चित्रादि मेरे पास हैं, उनका क्या करूँ।

समाधान - आपके प्रश्न के उत्तर में आदिपुराण पर्व 39 भाग 2/273 पर इस प्रकार कहा है -

'निर्दिष्ट स्थान ..... देवताः समयोचिताः।।45-48।।

अर्थ - जिसके लिये स्थान लाभ की क्रिया का वर्णन ऊपर दिया जा चुका है, ऐसा भव्य पुरुष जब मिथ्या देवताओं को अपने घर से बाहर निकालता है तब उसके गणग्रह नाम की क्रिया होती है।।45।। उस समय वह उन देवताओं से कहता है कि 'मैंने अपने अज्ञान से इतने दिन तक आदर के साथ आपकी पूजा की, परन्तु अब अपने ही मत के देवताओं की पूजा करूँगा। इसलिए क्रोध करना व्यर्थ है। आप अपनी इच्छानुसार किसी दूसरी जगह रहिए।' इस प्रकार प्रकट रूप से उन देवताओं को ले जाकर किसी अन्य स्थान पर छोड़ दे।।46-47।। इस प्रकार पहले देवताओं का विसर्जन कर अपने मत के शान्त देवताओं की पूजा करते हुए उस भव्य के यह गणग्रह नाम की चौथी क्रिया होती है।।48।।

उपर्युक्त आगम प्रमाण के अनुसार आपको भी अन्य देवताओं की मूर्ति या चित्रों का विसर्जन कर देना चाहिए। जैन शासन किसी मत का भी तिरस्कार करना नहीं सिखाता। आपको जो यह सुबुद्धि प्राप्त हुई है अर्थात् आपने जो गृहीत मिथ्यात्व दूर करके अपना जीवन सफल बनाया है। उसके लिये हम आपको धन्य मानते हैं और आपके इस कार्य की अनुमोदना करते हैं।

जिज्ञासा - क्या अभव्य समवशरण में जाते हैं, उनको भगवान का उपदेश प्राप्त होता है या नहीं?

समाधान - उत्तरपुराण में आचार्य गुणभद्र कहते हैं-

तन्निशम्यास्तिकाः सर्वे तथेति प्रतिपेदिरे।
अभव्या दूर भव्याश्च मिथ्यात्वोदय दूषिताः।।71-198।।

अर्थ - भगवान की वाणी को सुनकर जो भव्य थे, उन्होंने जैसा भगवान ने कहा था वैसा ही श्रद्धान कर लिया, परन्तु जो अभव्य अथवा दूरभव्य थे, वे मिथ्यात्व के उदय से दूषित होने के कारण संसार बढ़ाने वाली अनादि मिथ्यात्व वासना नहीं छोड़ सके।

महाकवि पुष्पदंत महापुराण भाग-1, पृष्ठ-264-65 में लिखते हैं-

अभवजीव जिणणाहें इच्छिय एक्कुण ते वि अणंत णियच्छिय।

अर्थ - जिननाथ के द्वारा अभव्य जीव भी चाहे (सम्बोधित किये) जाते हैं, वे एक नहीं अनेक देखे जाते हैं।

उपर्युक्त आगम प्रमाणानुसार अभव्यजीव समवशरण में जा सकते हैं और उनको भगवान की देशना भी सुनने को मिलती है।

जिज्ञासा - क्या अचौर्याणुव्रती गढ़ा हुआ धन स्वीकार कर सकता है?

समाधान - गढ़े हुए धन का स्वामी राजा होता है। अतः अचौर्याणुव्रती गढ़ा हुआ धन नहीं ले सकता। आगम प्रमाण इस प्रकार है - धर्मसंग्रह श्रावकाचार में ऐसा कहते हैं-

निधानादिधनं ग्राह्यं नास्वामिक मितीच्छया।
अनाथं हि धनं लोके देशपालस्य भूपतेः।।57।।

अर्थ - इस धन का कोई मालिक नहीं है, ऐसा समझकर जमीन में गढ़ा हुआ धन आदि नहीं ग्रहण करना चाहिए, क्योंकि जो धन अनाथ होता है अर्थात् जिस धन का कोई स्वामी नहीं होता है वह धन उस देश के राजा का होता है।

सागार धर्मामृत में इस प्रकार कहते हैं-

नास्वामिकमिति ग्राह्यं निधानादिधनं यतः।
धनस्यास्वामिकस्येह दायादो मेदिनीपतिः।।48।।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अर्थ - अचौर्याणुव्रत के पालक श्रावक के द्वारा यह धन स्वामिहीन है। ऐसा विचार करके जमीन और नदी आदि में रखा हुआ धन ग्रहण करने योग्य नहीं है, क्योंकि इस लोक में जिस धन का कोई स्वामी नहीं है, ऐसे धन का साधारण स्वामी राजा होता है।

आचार्य कार्तिकेय स्वामी कार्तिकेयानुप्रेक्षा की गाथा 36 की टीका में लिखते हैं -

'विस्मृतपति वस्तु अपिशब्दात् अविस्मृतं वस्तु केनापि विस्मृतम् अविस्मृतं वस्तु नादत्त न गृहणाति। अपिशब्दात् पतितम् अस्वामिकं भूम्यादौ लब्धं वस्तु न च गृहति।।'

अर्थ - भूली हुई या गिरी हुई या जमीन में गढ़ी हुई पराई वस्तु को भी नहीं लेता है।

जिज्ञासा - क्या किसी जीव के औपशमिक आदि पाँचों भाव एक समय संभव है?

समाधान - उपशान्त मोहनामक ग्यारहवें गुणस्थानवर्ती क्षायिक सम्यकदृष्टि जीव के पाँचों ही भाव एक साथ पाये जाते हैं। जैसे -

1. औपशमिक भाव में से औपशमिक चारित्र।
2. क्षायिक भावों में से क्षायिक सम्यक्त्व।
3. क्षायोपशमिक भावों में से क्षायोपशमिक मति, श्रुत, अवधि आदि ज्ञान व दर्शनों में चक्षु-अचक्षु आदि दर्शन/पाँच लब्धियाँ।
4. औदयिक भावों में से मनुष्य गति, अज्ञान, असिद्धत्व, शुक्ल लेश्या।
5. पारिणामिक भावों में से जीवत्व एवं भव्यत्वपना।

इससे स्पष्ट है कि उपशान्त मोही के एक समय में पाँचों ही भाव पाये जाते हैं।

1/205, प्रोफेसर्स कालोनी,
आगरा-282002 (उ.प्र.)

अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन में जैन गणित की धूम

भारतीय गणित इतिहास परिषद (I.S.H.M.) एवं रामजस कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली द्वारा गत 20-23 दिसम्बर 2001 के मध्य भारतीय राष्ट्रीय विज्ञान अकादमी, नई दिल्ली (I.N.S.A.) में First International Conference of New Millenium in History of Mathematics का सफल आयोजन किया गया। इस अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन में ब्रिटेन, अमेरिका, इजराइल, कनाडा, ईरान आदि देशों के अनेक प्रतिनिधियों ने अपनी प्रभावी उपस्थिति दी। 12 विदेशी एवं 49 भारतीय शोध पत्रों की श्रृंखला में निम्नांकित 6 शोध पत्र जैन गणित से सम्बद्ध प्रस्तुत किये गये-

1. Dr. Anupam Jain, Dept. of Mathematics, Holkar Autonomous Science College, Indore (M.P.), `Prominent Jaina Mathematicians and their Works'.

2. Mr Dipak Jadhav, Lecturer in Mathematics, J.N. Govt. Model High School, Barwani (M.P.), `Theories of Indices and Logarithms in India from Jaina Sources'.

3. Mr. N. Shiv kumar, Head, Dept. of Mathematics, R.V. College of Engineering, Bangalore (Karnataka), `Direct Method of Summation of Life Time Structure Matrix in the Gommatasara'.

4. Prof. Padmavathamma, Dept. of Mathematics, University of Mysore, Mysore (Karnataka), `Sri Mahaviracarya's Ganitasara-samgraha'.

5. Mrs. Pragati Jain, Lecturer in Mathematics, ILVA College of Science and Commerce, Indore, `Mathematical Contributions of Acarya Virasena'.

6. Mrs. Ujjawala Dondagaonkar, Eienstien International Foundation, Nagpur, A Brief Review of Literature of Jaina Karma Theory'.

इन 6 शोध पत्रों के माध्यम से जैन गणित के विविध पक्षों की इतनी प्रभावी प्रस्तुति की गई कि संगोष्ठी के समापन सत्र में Jaina School की ओर से प्रतिक्रिया व्यक्त करने हेतु इस स्कूल के अग्रणी शोधक डॉ. अनुपम जैन, इंदौर को आमंत्रित किया गया।

डॉ. जैन ने अपने उद्गार व्यक्त करते हुये कहा कि 'लगभग 25 वर्ष पूर्व भारतीय गणित इतिहास परिषद् की शोध पत्रिका 'गणित भारती' के प्रकाशन के अतिरिक्त अन्य गतिविधियाँ लगभग डेढ़ दशक से सुस्त पड़ी थीं, गत 2 वर्षों में पुनः गति आई है, इसी का प्रतिफल है कि जैन गणित के अध्ययन के कार्य में प्रगति हो रही है। I.S.H.M. के इस मंच से प्रो. बी.बी. दत्त, प्रो. ए.एन. सिंह एवं प्रो. एल.सी. जैन के काम को आगे बढ़ाने में मदद मिलेगी एवं जैनाचार्यों के गणितीय कृतित्व के सम्यक् अध्ययन से भारतीय गणित इतिहास के पुनर्लेखन का पथ प्रशस्त होगा।

जैन गणित के अध्ययन में संलग्न हम सभी कोचीन में प्रस्तावित आगामी सम्मेलन में सम्मिलित होने का विश्वास दिलाते हुए परिषद की शोध पत्रिका गणित भारती की आवृत्ति बढ़ाने का अनुरोध करते हैं।'

जैन गणित इतिहास के इन सभी अध्येताओं का दल गणिनी ज्ञानमती प्राकृत शोधपीठ के निदेशक डॉ. अनुपम जैन के नेतृत्व में पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी के दर्शन हेतु राजाबाजार गया। वहाँ पूज्य माताजी ने सभी को साहित्य भेंट कर मंगल आशीर्वाद दिया। प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका श्री चन्दनामति माताजी एवं क्षु. श्री मोतीसागरजी ने विद्वानों को सम्बोधित कर शोधपीठ से पूर्ण सहयोग का आश्वासन दिया।

डॉ. अनुपम जैन

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

व्यंग्य

नेता जी की टाँग

शिखरचन्द्र जैन

जिस तरह गुरु की छड़ी का स्वाद चखे बिना कोई भी विद्यार्थी अच्छी शिक्षा ग्रहण नहीं कर पाता, उसी तरह पुलिस का डंडा खाये बिना कोई भी व्यक्ति सफल राजनीतिज्ञ नहीं बन सकता। पिटाई और राजनीति का प्राचीनकाल से ही बड़ा घनिष्ठ संबंध रहा है। जिसे जितनी ज्यादा मार पड़ी, प्रतीकार की भावना उसमें उतनी ही अधिक बलवती हुई। इतिहास साक्षी है कि वह बदले की भावना ही थी, जिसने चाणक्य को चोटी में गाँठ लगा, नंद वंश की जड़ों को खोद कर उनमें मठा भरने की प्रतिज्ञा लेने को प्रेरित किया और फिर उसे सफलतापूर्वक राजनीति के आकाश में एक देदीप्यमान नक्षत्र की तरह स्थायी रूप से स्थापित कर दिया। वह प्रतिशोध की ज्वाला ही थी, जिसके वशीभूत हो एक नारी ने चोटी न बाँध, केशों को तब तक खुला छोड़ रखने का संकल्प लिया, जब तक कि उसे अपमानित करने वाले वंश-विहीन नहीं कर दिये जाते। और जैसा कि तय था, उसका संकल्प एक महायुद्ध के माध्यम से पूर्णता को प्राप्त हुआ। इससे सिद्ध होता है कि राजनीति में किसी को पीड़ा पहुँचाना, बहुधा पीड़ित को लाभदायक स्थिति में ला खड़ा कर देता है। यदि पीड़ित के चोटी हुई तब तो शर्तिया ही।

जिस तरह गुरु की छड़ी का स्वाद चखे बिना कोई भी विद्यार्थी अच्छी शिक्षा ग्रहण नहीं कर पाता, उसी तरह पुलिस का डंडा खाये बिना कोई भी व्यक्ति सफल राजनीतिज्ञ नहीं बन सकता। पिटाई और राजनीति का प्राचीनकाल से ही बड़ा घनिष्ठ संबंध रहा है। जिसे जितनी ज्यादा मार पड़ी, प्रतीकार की भावना उसमें उतनी ही अधिक बलवती हुई। .....राजनीति में किसी को पीड़ा पहुँचाना, बहुधा पीड़ित को लाभदायक स्थिति में ला खड़ा कर देता है।

कहते हैं कि पुलिस का प्रादुर्भाव, अँग्रेजों के आँगन में, विधि व व्यवस्था के पोषण के लिए हुआ था। इसका तात्पर्य यह निकलता है कि या तो पुलिस के आविर्भाव के पूर्व राज्य में विधि व व्यवस्था नामक कोई वस्तु हुआ ही नहीं करती थी, जिसका कि पोषण जरूरी हो अथवा इसके प्रति लोगों में तब इतनी श्रद्धा हुआ करती थी कि धर्म की माफिक वह भी स्वपोषित थी, या फिर कानून और व्यवस्था की हालत इतनी खराब थी कि इसे ठीक करने के लिए अलग से एक संस्था की आवश्यकता महसूस हुई। बहरहाल, कारण जो भी रहा हो पर इतना निर्विवाद है कि वर्दी और लाठी से सुसज्जित एक वफादार बल का संगठन कर, अँग्रेजों ने 'हीरा है सदा के लिए' की माफिक इसे राजनीति के क्षेत्र में चिर-स्थायी कर दिया। जन्म के साथ ही, हवा में लट्ठ भाँजते हुये पुलिस ने अपनी जिस छबि का निर्माण किया, उसे समय के सैकड़ों थपेड़े भी धूमिल करने में समर्थ नहीं हो सके। मेरे हिसाब से इसका कारण मूलतः यह रहा कि पुलिस ने लाठी का साथ कभी नहीं छोड़ा। बावजूद इसके कि वक्त के साथ अनेक आधुनिक अस्त्रों का अविष्कार हुआ, पुलिस ने लाठी पर अपनी पकड़ ढीली नहीं पड़ने दी। लाठी की प्रशस्ति में लिखे एक प्रसिद्ध हिन्दी कवि के काव्य में दी गयी सलाह- 'सब हथियारन छाँड़ हाथ में रखिऐ लाठी' के अनुरूप पुलिस को लाठी का उपयोग सदा सुविधाजनक लगा। 'हलका लाठी चार्ज', 'न्यूनतम आवश्यक बल प्रयोग' जैसे जुमले लाठी के चलते ही संभव हो सके। अगले को बिना लहू-लुहान किए, गहरी अन्दरूनी चोटों से गहन पीड़ा पहुँचाने की कला में पुलिस लाठी के सहारे की पारंगत हो सकी। शरीर के किस अंग में, किस कोण से, कितने बलपूर्वक बैंत से प्रहार करने पर अपराधी कितना उगलेगा, इसका गणित पुलिस ट्रेनिंग स्कूल के पहले सेमेस्टर में ही भली-भाँति सिखा दिया जाता रहा है। कुल मिला कर संक्षेप में यह कहना उपयुक्त होगा कि अपराध की विवेचना में पुलिस को कभी-कभी जो सफलता मिल जाती है, उसके पीछे लाठी का समुचित प्रयोग अवश्य ही होता है।

ज्ञातव्य है कि अँग्रेजी - राज में स्वतंत्रता आंदोलन को नियंत्रित करने में लाठी का उल्लेखनीय योगदान था। उन दिनों जब कोई स्वतंत्रता सेनानी घर से निकलता था, तो यह मानकर ही चलता था कि या तो उसकी खपरिया खुलेगी या फिर हाथ-पाँव टूटेंगे। साथ ही उसी हालत में जेल में ठूँस दिए जाने की संभावना भी बनी रहती थी, फिर भी आजादी के दीवाने हाथ में झण्डा लिए अक्सर जुलूस निकालते थे और बाकायदा पिटते थे। इस पिटाई में लाठी की पहली मार खुद झेलने के लिए नेता सदा आगे रहते थे। जो जितना बड़ा नेता होता था, उसे उतनी ही अधिक मार पड़ती थी। इसी प्रकार लाला लाजपतराय शहीद हुए और पंडित गोविन्द वल्लभ पंत जीवनभर गर्दन की पीड़ा सहते रहे।

कालांतर में, जब देश आजाद हुआ तो स्वतंत्रता सेनानियों की लिस्ट बनी। वरिष्ठता का क्रम जेल में बितायी गई अवधि एवं खायी गयी चोटों की गहराई के आधार पर निर्धारित किया गया और तदनुसार ही राजनीति में लाभ के पदों का आवंटन हुआ। इससे लोगों में यह संदेश पहुँचा कि आन्दोलन, लाठी की मार और जेल यात्रा, राजनीति में शीर्ष तक पहुँचने के लिए अनिवार्य सोपान हैं। इसमें छूट केवल उन्हें ही उपलब्ध हुई, जिनके पूर्वज इन प्रक्रियाओं से पूर्व में ही गुजर चुके थे। ऐसे लोगों की डायरेक्टली पार्टी-प्रेसीडेन्ट या प्रधानमंत्री तक बनने की पात्रता का होना सभी को स्वीकार्य हुआ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पर जिनके पूर्वज अपने वंशजों के लिए यह कमाई करके नहीं गए, उन्हें नए सिरे से लाठी-जेल झेलना लाजिमी माना गया।

जाहिर है कि इस तथ्य के मद्देनजर, हमारे देश में, आजादी के बाद भी तमाम आंदोलन चलते रहे। जो लोग राजनीति की राह पर आगे बढ़ना चाहते थे, वे आंदोलनों के माध्यम से पुलिस की लाठी का स्वाद चखने लगे। कभी-कभी जेल का जायजा भी लेने लगे। मेरा एक दोस्त था, जिसे मैं अक्सर लहु-लुहान अवस्था में अस्पताल में कराहते हुए पाता था। उसके सिर पर इतने टाँके लग चुके थे कि वहाँ फुटबाल की माफिक सिलाई ही सिलाई नजर आने लगी थी। हालाँकि इसके बावजूद भी वह मजदूर यूनियन के स्थानीय लीडर से आगे नहीं बढ़ पाया था। यह माहौल कई वर्षों तक चला, पर बाद में जब भिन्न-भिन्न राजनीतिक पार्टियाँ बारी बारी से सत्ता में आने लगीं, तो उनके बीच यह अलिखित समझौता हुआ कि आंदोलन और पिटाई दोनों ही प्रतीकात्मक होने चाहिए। जो आंदोलन करें, वो ज्यादा हुज्जत न करें और जो पीटे, वो सिर्फ रस्म अदायगी ही करें। जहाँ गिरफ्तारी दें लें, उसी जगह को अस्थायी जेल मान लें। तब से आंदोलनकारी बाकायदा अपने इरादों की सूचना पुलिस को देने लगे और पुलिस भी उनके साथ बाकायदा बैठक कर कुछ इस तरह का वार्तालाप करने लगी-

पुलिस- कहिये नेताजी कितने लोग होंगे जुलूस में?

नेताजी- दो लाख लोग तो गिरी हालत में भी हो जायेंगे।

पुलिस- अब इतना भी न फेंकिए, मान्यवर! दो लाख तो पूरे शहर की आबादी नहीं है।

नेता जी- तो उससे क्या होता है यह जनआंदोलन है। सौ मील के इर्द-गिर्द के सैकड़ों गाँवों से हजारों की संख्या में लोग पहुँचेंगे।

पुलिस- अच्छा तो यह बात है, फिर तो आंदोलन की विस्तृत रूपरेखा बतलाएँ।

नेताजी- सुबह आठ से जुलूस निकलेगा और फलाँ रास्ते से होता हुआ ठिकाँ स्कूल में पहुँच कर आमसभा में तब्दील हो जायेगा। फिर सभी लोग मिलकर मंत्री महोदय के घर के सामने धरने पर बैठेंगे।

पुलिस- सभी शांति सो तो होगा न? गिरफ्तारी की जरूरत तो नहीं पड़ेगी?

नेताजी- पड़ भी सकती है, वैसे गिरफ्तारी हो जाये तो मजा ही आ जाये। मुझ जैसे कुछ लोगों को तो गिरफ्तार कर ही लें आप। बस गिरफ्तारी जरा लंच से पहले ही कर लें और थोड़ा तगड़ा सा लंच खिलवा दें।

पुलिस- अब जो कैदियों की खुराक को मिलता है, वही न खर्च कर पायेंगे हम लोग?

नेताजी- अरे नहीं, श्रीमान् जी। आप तो किसी थ्री स्टार होटल के केटरर को कह दें। जो ऊपर से लगेगा, सो हमारी पार्टी देगी। लंच में कंजूसी न करें और डिनर के पहले रिहा कर दें।

पुलिस- ठीक है। लेकिन ध्यान रहे, शांति बनाए रखें। कानून हाथ में न लें, वरना हमें सख्ती बरतनी होगी।

इस तरह सौहार्दपूर्ण वातावरण में औपचारिक चर्चा के बाद पूरा टाइम टेबिल तय होता है और तदनुसार ही आंदोलन चलता है। इस व्यवस्था से दोनों पक्ष प्रसन्न रहते हैं। वैसे तो इस समझौते का आदर, सामान्य रूप से सभी करते हैं, लेकिन बाज वक्त किसी अति उत्साही व्यक्ति अथवा व्यक्ति समूह के कारण बड़ी गड़-बड़ मच जाती है। ऐसा, बहुधा आंदोलनकर्त्ताओं के बीच विद्यमान विभिन्न गुटों के आपसी टकराव के कारण होता है, जो कि कभी-कभी भीषण उग्रता धारण कर लेता है, जैसा कि अभी पिछले दिनों फलाँ प्रदेश की राजधानी में हुआ। कारण का खुलासा तो नहीं हो सका, पर इस बार सत्ताविहीन दल, सत्तापक्ष से सचमुच नाराज पाया गया। संभवत: इनका कोई विधायक उनके साथ जा बैठा या कि ऐसा ही कुछ हो गया। अब जैसी कि परम्परा है, अपने सिक्के को खोटा तो कोई कहे कैसे, सो परखैया पर दोषारोपण करते हुए विपक्ष ने आंदोलन का बिगुल फूँक दिया। उन्होंने ऐलान किया कि वो सत्तापक्ष की ईट से ईट बजा देंगे। उन्हें चैन से नहीं सोने देंगे। इतना जबरदस्त आंदोलन करेंगे कि उनका जीना हराम हो जायेगा। विपक्षी दल के राष्ट्रीय नेता व सांसद भी आंदोलन में भाग लेंगे और सत्तापक्ष के दल-बदल के गंदे खेल का खुलासा जनता के सामने करेंगे।

सत्तापक्ष यह भलीभाँति जानता था कि खिसयानी बिल्ली खंभा तो अवश्य ही नोंचेगी, पर इससे आगे कुछ नहीं कर पायेगी। इसलिए पुलिस ने भी रोजमर्रा की ही माफिक आंदोलनकारियों से चर्चा की। उनका कार्यक्रम जाना। कब कहाँ, कितने लोग एकत्रित होंगे? कहाँ सभा होगी? कौन-कौन वक्ता होंगे? क्या क्या बोलेंगे? कितने लोग गिरफ्तारी देंगे? आदि की जानकारी हासिल की। थोड़ी हँसी-ठिठोली की और तदनुसार कानून और व्यवस्था बनाए रखने के लिए जरूरी इन्तजाम में लग गए। बाहर से पुलिस बुला ली गई। आरक्षित आरक्षी बल के जवान डंडा लेकर तैनात कर दिए गए। गिरफ्तार लोगों को जेल ले जाने को बसों का जुगाड़ कर लिया गया। इस तरह पुलिस और प्रशासन चाक-चौबंद हो गए।

फिर जैसा कि तय था, निर्धारित तिथि को आंदोलन हुआ। जुलूस निकला। सभा हुई। पार्टी के कतिपय बड़े नेता सचमुच ही आंदोलन में शरीक हुए। इनमें कुछ सांसद और कई विधायक भी थे, जो कि प्रदेश में पार्टी के भविष्य का लेकर वाकई चिंतित थे। सबके भाषणों में सत्तापक्ष के प्रति तीव्र आक्रोश की भावना परिलक्षित हुई। भाषा में आग की तपस महसूस हुई। ईट का जवाब पत्थर से देने का आह्वान किया गया। जाहिर है कि लोगों को उत्तेजित करने के लिए इतना काफी था। वैसे भी भारतीय भयंकर भावुक होते हैं। एक बार जो भावना में बहे, तो फिर कोई ब्रेक काम नहीं आता। खुद उनके नेता उन्हें सँभालने में समर्थ नहीं रह जाते। इसके उदाहरण से सभी लोग भली भाँति परिचित हैं। तो कुछ उसी अंदाज में, सभा में, बहुतेरे लोग खड़े हो गए और करो या मरो की मुद्रा धारण करते हुए, बेरीकेट तोड़कर मंत्रियों के बंगलों की ओर कूच करने को उतारू हो गए। पुलिस तत्काल हरकत में आई। उसने फौरन लाउडस्पीकर पर चेतावनी देने

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

की औपचारिकता पूरी की और न्यूनतम बल प्रयोग के साथ हल्के लाठी चार्ज का आदेश प्राप्त कर शुरू हो गई। बस, फिर क्या था? पुलिस के सक्रिय होते ही भगदड़ मच गई। जिसके जिधर सींग समाए, वह उधर ही भाग लिया। जो सामने पड़ गए, वो पिट गए। चंद मिनटों में ही मैदान खाली हो गया।

कुछ देर बाद जब पुलिस ने स्थिति की समीक्षा की तो पता लगा कि यों तो पुलिस की बर्बरता सिद्ध करने हेतु बहुतेरे लोग अस्पताल पहुँचे थे, पर ज्यादातर लोग प्राथमिक उपचार के बाद ही विदा कर दिए गए। केवल दो लोग ही अस्पताल में दाखिल करने लायक पाए गए, जिनमें एक प्रसिद्ध राष्ट्रीय नेता व सांसद थे, जिनकी एक टाँग में फ्रेक्चर था और दूसरा कोई मामूली कार्यकर्त्ता था, जिसकी दोनों टाँगों में फ्रेक्चर था। अब निष्पक्ष रूप से देखा जाय, तो इतनी चोटें तो इतने बड़े आंदोलन में सामान्य थीं, पर सांसद की टाँग होने से मामले ने तूल पकड़ लिया।

अखबारों के माध्यम से सांसद ने यह आरोप लगाया कि सत्तापक्ष का इरादा पुलिस के द्वारा उनकी हत्या करवाने का था, जिसमें सफल न होने पर उनकी टाँग तुड़वा दी गई। यह न केवल एक सांसद का अपमान था, बल्कि उसके संसदीय विशेषाधिकार का उल्लंघन भी था, जिसके लिए पुलिस और प्रशासन को संसद को जवाबद देना होगा। उन्होंने एक संसदीय समिति के द्वारा इस घटना की जाँच करवा कर दोषियों को सजा दिलाने की प्रार्थना की। जाहिर है कि सांसद की बौखलाहट टाँग में हो रहे दर्द के कारण कम और पिटाईजनित फजीहत के कारण ज्यादा थी। पार्टी के प्रदेशीय नेता भी सांसद को पहुँची पीड़ा को लेकर शर्मिंदा थे। आंदोलन के असफल होने का दर्द तो था ही। इसलिए पार्टी का पूरा जोर सांसद की पिटाई के लिए सत्तापक्ष की भरपूर भर्त्सना करने में लगा हुआ था। तमाम अखबार बस इसी खबर को महत्त्व दे रहे थे। जिसकी दोनों टाँगों में फ्रेक्चर था, उसे किसी ने नहीं पूछा। उसका उल्लेख किसी अखबार में नहीं था।

कहते हैं कि इस स्थिति का लाभ उठाते हुए, उसी पार्टी के किसी असंतुष्ट ने या फिर सत्तापक्ष के किसी चाणक्य ने उस दोनों टाँगों में फ्रेक्चर वाले को उकसा दिया, जिसके फलस्वरूप अगले ही दिन कथिक रूप से उसके द्वारा दिया गया निम्नांकित वक्तव्य समाचार पत्रों में प्रकाशित हुआ-

'क्या जमाना आ गया है कि एक स्थापित नेता आंदोलन के दौरान हुई अपनी पिटाई का रोना हो रहा है। न पीटे जाने को अपना विशेषाधिकार बतला रहा है। मानो पिटने का उत्तरदायित्व केवल सामान्य कार्यकर्ता का ही हो। गोया सत्तापक्ष अगर पीटना ही चाहता है, तो उसे मामूली कार्यकर्ता को ही पीटना चाहिए, बड़े नेता को कदापि नहीं। वाह, क्या नेता होने लगे हैं आजकल!'

और इस तरह पुलिस की पिटाई से पीड़ित एक और सामान्य कार्यकर्ता नेता बनने की राह पर चल पड़ा।

7/56-ए, मोतीलाल
नेहरूनगर (पश्चिम)
भिलाई (दुर्ग) छत्तीसगढ़

श्री अतिशय क्षेत्र मक्सी पर यात्रियों का भारी आवागमन

श्री दिगम्बर जैन अतिशय क्षेत्र मक्सी की नवीन प्रबंधकारिणी के कुशल निर्देशन में व्यवस्थाओं में व्यापक सुधार करने से क्षेत्र पर यात्रियों की संख्या में भारी वृद्धि हुई है। धार्मिक, सामाजिक गतिविधियों में भी वृद्धि हुई है।

अहिंसा वर्ष के अंतर्गत तीर्थंकरों के चौबीस दीक्षावृक्षों के पौधों की रोपणी की गई, जो वृक्षों का रूप लेकर क्षेत्र पर हरियाली प्रदान कर रही है। ताम्रपत्र पर कालपत्र उत्कीर्ण करवाकर 40 फिट गहराई पर स्थापित कर मारबल का सुन्दर स्तम्भ निर्माण कराया गया जिसे समारोहपूर्वक लोकार्पित किया गया। नगर के सबसे लम्बे निर्माणाधीन मार्ग का नामकरण महावीरमार्ग किया गया। क्षेत्र के आसपास के मुख्य मार्गों पर इन्डीकेटर लगाये गये हैं। ए.बी. रोड से नगर में प्रवेश के स्थान पर भव्य ''अहिंसा द्वार'' का शिलान्यास किया जाकर निर्माण की प्रक्रिया जारी है। गुरुकुल परिसर में लायन्स क्लब मक्सी के सहयोग से नेत्र शिविर का आयोजन करवाकर 66 लोगों को लैन्स प्रत्यारोपण करवाया गया है।

यात्रियों के लिये भव्य भोजनशाला के भवन का निर्माण 8 लाख की लागत से किया जा रहा है। इसके निर्माण कोष में 5000 रुपये के दानदाताओं के फोटो भवन में लगाने की योजना है, जिसका शिलान्यास श्रीमती विमला देवी बिलाला एवं पुत्रगण श्री सुनील जी, सुधीर जी बिलाला द्वारा किया गया। इसमें अच्छा सहयोग समाज से मिल रहा है।

दिगम्बर जैन महासमिति द्वारा जयपुर में आयोजित कार्यशाला में क्षेत्र से 2 प्रतिनिधि व्यवस्थापन के प्रशिक्षण में भेजे गये थे। वहाँ से प्राप्त अनुभवों का लाभ व्यवस्थापन में मिल रहा है।

क्षेत्र पर वृद्धाश्रम निर्माण की योजना, सम्पूर्ण क्षेत्र के जीर्णोद्धार की योजना, आयुर्वेदिक चिकित्सालय की योजना को मूर्तरूप देने हेतु भी पहल की जा रही है। दिगम्बर जैन महासमिति के राष्ट्रीय अध्यक्ष श्री प्रदीप कुमार सिंह जी कासलीवाल क्षेत्र के सर्वांगीण विकास के लिये विशेष रूप से प्रयत्नशील हैं।

गुरुकुल मक्सी में 40 छात्रों के लिये पूर्णत: नि:शुल्क व्यवस्था उपलब्ध है। धार्मिक, लौकिक, शारीरिक शिक्षण के साथ कम्प्यूटर शिक्षा की भी व्यवस्था उपलब्ध कराई गई है। क्षेत्र का वार्षिक मेला महोत्सव रंगपंचमी 2 अप्रैल को श्री दिगम्बर जैन सोशयल ग्रुप म.प्र. रीजन के संयोजकत्व में भव्य कार्यक्रमों के साथ आयोजित होगा। समाज से अनुरोध है कि क्षेत्र पर दर्शन लाभ लेने एवं नवीन उपलब्धियों का अवलोकन करने अवश्य पधारें।

ज्ञानभानु झांझरी, महामंत्री
श्री दिगम्बर जैन अतिशय क्षेत्र मक्सी
जिला शाजापुर म.प्र.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

दर्शन पाठ

दर्शनं देव-देवस्य, दर्शनं पाप नाशनम्।
दर्शनं स्वर्गसोपानं, दर्शनं मोक्षसाधनम्।।1।।

शब्दार्थ- सोपानं- सीढ़ी।

अर्थ - देवाधिदेव का दर्शन पापों का नाशक है। दर्शन स्वर्ग की सीढ़ी है और मोक्ष का साधन है।

दर्शनेन जिनेन्द्राणां, साधूनां वन्दनेन च।
न चिरं तिष्ठति पापं, छिद्रहस्ते यथोदकम्।।2।।

शब्दार्थ- चिर- अधिक समय तक, यथा- जैसे, छिद्रहस्थे- छिद्रसहित हाथों में, उदकं - जल।

अर्थ - जिनेन्द्रदेव के दर्शन से और साधुओं की वंदना से पाप अधिक समय तक नहीं ठहरते, जिस प्रकार छिद्र सहित हाथों में जल अधिक समय तक नहीं ठहरता है।

वीतरागमुखं दृष्ट्वा, पद्मरागसमप्रभम्।
जन्मजन्मकृतं पापं, दर्शनेन विनश्यति।।3।।

शब्दार्थ- समप्रभं-समान प्रभायुक्त, दृष्ट्वा- देखकर।

अर्थ - पद्मराग मणि के समान प्रभायुक्त वीतराग भगवान के मुख को देखकर जन्म जन्मान्तर में किये गये पाप दर्शन से नष्ट हो जाते हैं।

दर्शनं जिनसूर्यस्य, संसारध्वान्तनाशनम्।
बोधनं चित्तपद्मस्य, समस्तार्थ-प्रकाशनम्।।4।।

शब्दार्थ - संसार ध्वान्त- संसार रूपी अंधकार का, बोधनं- विकासक, चित्त पद्मस्य - मनरूपी कमल का, समस्तार्थ- समस्त पदार्थों का।

अर्थ - जिनेन्द्र रूपी सूर्य का दर्शन संसार रूपी अंधकार का नाश करने वाला व मनरूपी कमल का विकासक और समस्त पदार्थों का प्रकाशक है।

दर्शनं जिनचन्द्रस्य, सद्धर्मामृतवर्षणम्।
जन्मदाहविनाशाय, वर्धनं सुख वारिधेः।।5।।

शब्दार्थ- जन्मदाह-जन्म रूपी ताप का, वर्षणम्-वर्षा करता है, वर्धनम्-वृद्धि के लिये, वारिधे-समुद्र की।

अर्थ - जिनेन्द्र रूपी चन्द्रमा का दर्शन जन्म रूपी ताप का नाश करने के लिये सुख रूपी समुद्र की वृद्धि के लिये, सद्धर्म रूपी अमृत की वर्षा करता है।

जीवादितत्त्वप्रतिपादकाय, सम्यक्तवमुख्याष्टगुणार्णवाय।
प्रशान्तरूपाय दिगम्बराय, देवाधिदेवाय नमो जिनाय।।6।।

शब्दार्थ - गुणार्णवाय - गुणों के समुद्र, जिनाय - जिनेन्द्र के लिये।

अर्थ - जीवादि तत्त्वों के प्रतिपादक, सम्यक्वादि आठ मुख्य गुणों के समुद्र प्रशान्त रूप दिगम्बर देव अरहन्त प्रभु जिनेन्द्र के लिये नमस्कार हो।

सात तत्त्व- जीव, अजीव, आस्रव, बंध, संवर, निर्जरा और मोक्ष। आठ गुण - सम्यकत्व, केवलज्ञान, केवलदर्शन, अनंतवीर्य, सूक्ष्मत्व, अगुरु लघुत्व, अवगाहनत्व और अव्याबाधत्व।

चिदानन्दैकरूपाय, जिनाय परमात्मने।
परमात्मप्रकाशाय, नित्यं सिद्धात्मने नमः।।7।।

शब्दार्थ - चिद्-आत्मा, नित्यं-हमेशा।

अर्थ - आप आत्मानन्द स्वरूप हैं, कर्मों को जीतने वाले हैं, उत्कृष्ट आत्मा है। परम् आत्मतत्त्व के प्रकाशक सिद्धस्वरूप हैं, आपको हमेशा नमस्कार हो।

अन्यथा शरणं नास्ति, त्वमेव शरणं मम।
तस्मात्कारूण्यभावेन, रक्ष-रक्ष जिनेश्वर।।8।।

शब्दार्थ - त्वम्-आप, एव-ही, तस्मात- इसलिए, मम- मेरी।

अर्थ - आपके सिवा अन्य कोई शरण नहीं है, आप ही मेरे शरण है, इसलिए हे जिनेन्द्र। आप दया करके, मेरी रक्षा करो- मेरी रक्षा करो।

न हि त्राता न हि त्राता, न हि त्राता जगत्त्रये।
वीतरागात्परो देवो, न भूतो न भविष्यति।।9।।

शब्दार्थ - जगत्त्रये-तीन लोक में, परः-दूसरा कोई, त्राता- रक्षा करने वाला, भूतो- भूतकाल में, भविष्यति - आगामी काल में।

अर्थ - तीन लोक में वीतराग अरहन्त के सिवा और कोई जीवों की रक्षा करने वाला नहीं है, रक्षा करने वाला नहीं है। न भूतकाल में हुआ और न आगे होगा।

जिनेभक्ति र्जिनेभक्ति र्जिनेभक्ति र्दिने दिने।
सदा मेऽस्तु सदा मेऽस्तु सदा मेऽस्तु भवे भवे।।10।।

शब्दार्थ - दिने-दिने- प्रतिदिन, मे- मुझमें, सदाऽस्तु- सदा हो, भवे-भवे - भव भव में।

अर्थ - प्रतिदिन भव-भव में मुझमें जिनभक्ति सदा हो, मुझमें जिनभक्ति सदा हो, मुझमें जिनभक्ति सदा हो।

जिनधर्म-विनिर्मुक्तो मा भवेच्चक्रवर्त्यपि।
स्याच्चेटोऽपि दरिद्रोऽपि, जिनधर्मानुवासितः।।11।।

शब्दार्थ - विनिर्मुक्तः- रहित, मा- नहीं, स्याच्चेटोऽपि- भले ही दुखी हो।

अर्थ - जिनधर्म से रहित मुझे चक्रवर्ती पद भी नहीं चाहिए, भले ही दुःखी दरिद्री होना पड़े, पर जैनकुल में ही मेरा जन्म हो।

जन्म जन्म कृतं पापं जन्म कोटि-मुपार्जितम्।
जन्ममृत्युजरारोगो हन्यते जिन दर्शनात्।।12।।

शब्दार्थ - कृतं-किये गये, कोटिमुपार्जितम्-करोड़ो उपार्जित, जरा-बुढ़ापा, हन्यते- नष्ट हो जाते हैं।

अर्थ - जिनेन्द्र भगवान के दर्शन से जन्म जन्मान्तर में किये गये करोड़ों उपार्जित पाप और जन्म, मृत्यु, बुढ़ापा तथा रोग नष्ट

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

हो जाते हैं।

अद्याभवत् सफलता नयनद्वयस्य,
देव! त्वदीय चरणाम्बुज-वीक्षणेन।
अद्य त्रिलोक-तिलक! प्रतिभासते मे,
संसार-वारिधिरयं चुलकप्रमाणः।।13।।

शब्दार्थ - अभवत्-हुआ,त्वदीय-आपके, चरणाम्बुज- चरण-कमल, वीक्षणेन-देखने से, त्रिलोक-तिलक- हे तीन लोक के स्वामी, वारिधिः- समुद्र, चुलुक- चुल्लु, प्रतिभासते- लगता है।

अर्थ - हे जिनेन्द्र देव! आपके चरण कमल देखने से आज मेरे दोनों नेत्र सफल हुए हैं। हे तीन लोक के स्वामी! आज मुझे यह संसारसमुद्र चुल्लु प्रमाण लगता है।

अर्थकर्ता-ब्र. महेश
श्रमण संस्कृति संस्थान, सांगानेर

'तिरुक्कुरल' की सूक्तियाँ

1. 'अ' जिस प्रकार शब्द-लोक का आदि वर्ण है, ठीक उसी प्रकार आदि भगवान् (भगवान्-आदिनाथ) पुराण-पुरुषों में आदिपुरुष हैं।
2. यदि तुम सर्वज्ञ परमेश्वर के श्रीचरणों की पूजा नहीं करते हो, तो तुम्हारी सारी विद्वत्ता किस काम की?
3. जो मनुष्य उस कमलगामी परमेश्वर के पवित्र चरणों की शरण लेता है, वह जगत् में दीर्घजीवी होकर सुख-समृद्धि के साथ रहता है।
4. धन्य है वह मनुष्य, जो आदिपुरुष के पादारविन्द में रत रहता है। जो न किसी से राग करता है और न घृणा, उसे कभी कोई दुःख नहीं होता।
5. देखो, जो मनुष्य प्रभु के गुणों का उत्साहपूर्वक गान करते हैं, उन्हें अपने भले-बुरे कर्मों का दुःखद फल नहीं भोगना पड़ता।
6. जो लोग उस परम जितेन्द्रिय पुरुष के द्वारा दिखाये गये धर्ममार्ग का अनुसरण करते हैं, वे चिरंजीवी अर्थात् अजर-अमर बनेंगे।
7. केवल वे ही लोग दुःखों से बच सकते हैं, जो उस अद्वितीय पुरुष की शरण में आते हैं।
8. धन-वैभव और इन्द्रिय-सुख के तूफानी समुद्र को वे ही पार कर सकते हैं, जो उस धर्मसिन्धु मुनीश्वर के चरणों में लीन रहते हैं।
9. जो मनुष्य अष्ट गुणों से मण्डित परब्रह्म के आगे सिर नहीं झुकाता, वह उस इन्द्रिय के समान है, जिसमें अपने गुणों (विषय) को ग्रहण करने की शक्ति नहीं है।
10. जन्म-मरण के समुद्र को वे ही पार करते हैं, जो प्रभु के चरणों की शरण में आ जाते हैं। दूसरे लोग उसे पार नहीं कर सकते।

प्रस्तुति - विनोद कुमार जैन

सप्त दिवसीय शिक्षण प्रशिक्षण सम्पन्न

श्री दि. जैन श्रमण संस्कृति संस्थान में 11.01.02 से 17.01.02 तक सप्त दिवसीय सर्वोदय ज्ञान प्रशिक्षण शिविर का आयोजन किया गया, जिसमें शिविर के 'निदेशक' श्रीमान् डॉ. शीतलचन्द जी प्राचार्य, 'कुलपति' श्रीमान् राजमल जी बेगस्या, ब्र. संजीव जी कटंगी, ब्र. महेश जी सतना 'प्रशिक्षक' श्री अरविन्द जी शास्त्री, 'शिविर प्रभारी' श्रीमान् प्रद्युम्न जी शास्त्री ने इस शिविर को विशेष गति प्रदान की। इस शिविर में प्रशिक्षक श्री अरविन्द जी शास्त्री ने शिक्षण पद्धति की समस्याओं से अवगत कराते हुए शास्त्री कक्षा में अध्ययनरत छात्र विद्वानों को शिक्षण पद्धति का आद्योपान्त प्रशिक्षण दिया। जिसे छात्र विद्वानों ने उत्साहपूर्वक ग्रहण किया।

अरविन्द जी शास्त्री ने कक्षा में उपस्थित छात्रों के समक्ष अमुक विषय को किस प्रकार प्रस्तुत करके सन्तुष्ट करना आदि शिक्षण पद्धति की शैली का प्रतिपादन करते हुए आदर्श पाठ योजना एवं आदर्श पाठ निर्देश के बारे में छात्र विद्वानों को विस्तृत प्रशिक्षण दिया। 15.01.2002 को प्रायोगिक रूप से विशेष कक्षा का आयोजन करके थोड़े विषय को एक निश्चित समय तक कैसे पढ़ायें इत्यादि प्रक्रियाओं से अवगत कराया। क्योंकि पढ़ानेवाले के समक्ष प्रथम समस्या यही होती है कि पुस्तक तो छोटी सी है और समय अधिक है तो उसे निश्चित समय तक कैसे पढ़ावें? शिविर के समापन पर पं. विनोद कुमार जी (रजवांस) ने कहा कि नीति व ज्ञान कभी बासा नहीं होता है। यह नीति और ज्ञान उपयोग के बिना पंगु है। जिस प्रकार किसी को धन का उपयोग करना नहीं आता तो उसके पास धन का होना व्यर्थ है, उसी प्रकार जिसको विद्या का उपयोग करना नहीं आता वह विद्या का सही पात्र नहीं है। अतः इस ज्ञान को उपयोग में लाना ही चाहिये। डॉ. शीतलचन्द जी ने इस विद्या को लक्ष्य करके कहा कि इसके माध्यम से छात्र विद्वान अपनी बात जन-जन तक पहुँचा पायेंगे। ब्र. महेश जी ने कहा कि ऐसे शिविरों का समय-समय पर आयोजन होते रहना चाहिये। पश्चात् डॉ. शीतलचन्द जी ने शाल ओढ़ाकर ब्र. महेश जी ने शास्त्र भेंटकर एवं पी.सी. पहाड़िया जी ने माला पहिनाकर श्री अरविन्द जी शास्त्री का सम्मान किया। अंत में छात्रावास अधीक्षक श्री प्रद्युम्न जी शास्त्री ने सभी महानुभावों का आभार व्यक्त करते हुए शिविर में प्रथम, द्वितीय एवं तृतीय स्थान प्राप्त करनेवाले प्रशिक्षणार्थियों को सम्मानित किया। संचालन संजीव जी ललितपुर ने किया।

भरत कुमार बाहुबलि कुमार 'शास्त्री'
श्री दि. जैन श्रमण संस्कृति संस्थान, सांगानेर, जयपुर

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

बालवार्ता

मनुष्यता की खोज

मुनिश्री अजितसागर

एक फकीर सभा के बीच या बाजार के बीच से जाता है, हाथ में मशाल लिये व्यक्ति के पास जाकर गौर से देखता, और वापस आ जाता है। मंच से मनोज और राजेश दोनों देखकर आश्चर्यचकित हो जाते हैं तभी मनोज राजेश से कहता है-

मनोज- अरे! राजेश देखो! ये फकीर बाबा पागल सा लगता है, दिन में मशाल जलाये हुए आदमियों को ऐसा देख रहा है जैसे दिखता ही न हो?

राजेश- हाँ! मुझे भी ऐसा ही लग रहा है। लगता है फकीर का मशाल को लेकर चलने में कुछ रहस्य छुपा है।

मनोज- चलो! फकीर बाबा से चर्चा करते हैं-

(मनोज और राजेश फकीर के पास जाकर पूछते हैं)

मनोज- अरे बाबा! क्या.. कम दिखाई देता है, जो दिन में मशाल लेकर चल रहे हो?

फकीर- बच्चो! अभी तुम्हारी समझ में नहीं आयेगा! जाओ हमें अपना काम करने दो। (फकीर आगे बढ़ने लगता है, मनोज- राजेश साथ-साथ चलने लगते हैं)

राजेश- बाबा! आखिर ऐसी कौन सी बात है जो हमारी समझ में नहीं आयेगी?

फकीर - बच्चो! इसमें बहुत बड़े रहस्य की बात है, इसलिए नहीं समझ में आयेगी।

मनोज- बाबा! वही रहस्य की बात तो हम जानना चाहते हैं।

फकीर - बेटा! मैं एक वस्तु की खोज कर रहा हूँ।

मनोज - कौन सी वस्तु की खोज कर रहे हैं आप?

फकीर - बच्चो! चलो हमें अपना काम करने दो, तुम अपना काम करो, लगता है जिस वस्तु की मैं खोज कर रहा हूँ वह तुम्हारे पास भी नहीं है।

राजेश - बाबा! आखिर वह कौन सी वस्तु है जो हमारे पास नहीं है?

फकीर - बच्चो! जानना चाहते हो वह वस्तु क्या है?

राजेश - मनोज- हाँ बाबा! बताओ वह क्या वस्तु है?

फकीर - अच्छा चलो! वहाँ बैठकर आपको बताता हूँ।

(एक स्थान पर बैठ जाते हैं। तब फकीर बाबा दोनों को बताते हैं।)

फकीर - बच्चो! वह वस्तु क्या है? तो सुनो वह वस्तु है... 'मनुष्यता', मैं मनुष्यता की खोज कर रहा हूँ।

मनोज - मनुष्यता! (राजेश की तरफ देखते हुए कहता है)

राजेश - यहाँ पर तो सभी मनुष्य बैठे हैं, बाबा! क्या इन सभी मनुष्यों में आपको मनुष्यता नहीं दिखाई देती है?

फकीर - इसलिये तो कहा था बच्चो, अभी तुम लोग हमारी इस रहस्यमय खोज को समझ नहीं पाओगे, इसलिये मैं बता नहीं रहा था।

मनोज- मनुष्य से हटकर क्या मनुष्यता होती है?

फकीर - नहीं....! मनुष्य के अंदर ही मनुष्यता होती है, पर आज वह नहीं दिखती।

राजेश- आपने कैसे कह दिया बाबा! कि मनुष्य के अंदर अब मनुष्यता नहीं है।

फकीर - हाँ बच्चो! आज ऐसी ही दशा है। मनुष्य तो है पर मनुष्यता नहीं है। आज का व्यक्ति कैसा है? किसी ने कहा है -

हिन्दू है कोई और मुसलमान है कोई।
मैं तो बस यही खोजता हूँ कि इंसान है कोई।।

मनोज - बाबा! मनुष्य के अंदर ही तो मनुष्यता होती है।

फकीर - हाँ बेटा! बस मैं उस मनुष्य को खोज रहा हूँ, जिसके अंदर वह मनुष्यता है।

राजेश - बाबा! मनुष्यों की इतनी बड़ी सभा में आपको मनुष्यता नहीं दिखाई दी?

फकीर - (सिर हिलाते हुए) ऊ हूँ...! कोई नहीं दिखता है। आज का व्यक्ति कैसा है? किसी ने कहा है -

इंसानियत की रोशनी गुम हो गई है कहाँ?
साये है आदमी के, पर आदमी कहाँ?

मनोज - बाबा! आप ये कैसे कह सकते हैं कि आदमी का साया है पर आदमी नहीं?

फकीर - हाँ बेटा! ऐसा ही है। मनुष्य इस शरीर को ही मनुष्यता मान लेता है, यही सबसे बड़ी भूल है।

राजेश - बाबा! आज का मनुष्य कैसा है?

फकीर - आज सभी स्वार्थी हैं, लोभी हैं, कपटी है, और इसे अपने सिवा और किसी से मतलब नहीं, अपने वृद्ध माता-पिता को भी भूल जाता है।

मनोज - बाबा! आखिर यह हुआ कैसे जो मनुष्य स्वार्थी लोभी हो गया?

फकीर - बेटा! इसी बात को तो समझना है। आज सब स्वार्थी हैं। जब तक व्यक्ति का स्वार्थ सिद्ध होता है तब तक यह अपना मतलब सिद्ध करता है, बाद में यह दूध में गिरी हुई मक्खी की तरह दूर फैंक देता है।

राजेश - वह कैसा बाबा! जरा समझाये।

फकीर - बैटा। देखो, इस मनुष्य की स्वार्थता। यह अपने घर गाय को रखता है और जब तक वह दूध देती है, तब तक उसकी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

रक्षा करता है, बाद में किसी कसाई को बेच देता है, जिससे कत्लखानों में उसे असमय में काट दिया जाता है। क्या यह मनुष्य की स्वार्थता नहीं?

मनोज - बाबा! ठीक तो है। वृद्ध पशुओं को अपने पास रखने से क्या लाभ है? हमसे तो आज यही कहा जाता है-

''विश्व एक बाजार है, यहाँ सिर्फ मनुष्य को जीने का अधिकार है।''

फकीर - हाँ! आज ऐसा व्यवहार इस स्वार्थी मनुष्य का है। यह आज की पढ़ाई का दोष है, अच्छे संस्कार प्रदान नहीं करती। आज हमारी शिक्षा पर पाश्चात्य संस्कृति का प्रभाव है, बेटा!

राजेश - बाबा! हमारी भारतीय संस्कृति क्या है?

फकीर - बहुत अच्छा प्रश्न है बेटा! हमारी भारतीय संस्कृति है-

'विश्व एक बाजार है, यहाँ प्राणी मात्र को जीने का अधिकार है।'

मनोज - तो हमें वृद्ध जानवर, आदि की भी सेवा करना चाहिए?

फकीर - हाँ बेटा! वृद्ध जानवरों में भी तो हमारी जैसा आत्मा है। हम उन्हें व्यर्थ समझकर कसाई को दे देते हैं। तो आपके घर में दादा-दादी आदि भी तो वृद्ध होते हैं। उन्हें भी कहीं बेच देना चाहिए, वे भी किसी काम के नहीं है।

(मनोज, राजेश से - अरे चलो स्कूल को देर हो जायेगी)

राजेश- बाबा! आपने तो हमारी आँख खोल दीं, हम आज संकल्प करते हैं - दीन-दुखी व्यक्ति को कभी नहीं सतायेंगे, उनकी सहायता करेंगे और मूक प्राणियों की रक्षा करेंगे।

फकीर - बहुत अच्छा बच्चो! मनुष्य के इस तन को मनुष्यता नहीं समझो, हमारे अंदर, प्रेम, दया, करुणा, वात्सल्य भाव जो हैं वही हमारी मनुष्यता हैं। उनको पहचानो और अपने जीवन में उनको लाओ...। अच्छा बच्चो हम चलते हैं।

भारतीय ज्ञानपीठ पुरस्कृत

प्राचीन जैन साहित्य, संस्कृति के संरक्षण एवं सराक बन्धुओं के उत्थान हेतु सतत सचेष्ट परम पूज्य उपाध्याय श्री ज्ञानसागर जी महाराज के प्रति कृतज्ञता ज्ञापित करने के भाव से श्रुत संवर्द्धन संस्थान, मेरठ ने अप्रैल 2000 में उपाध्याय ज्ञानसागर श्रुत संवर्द्धन पुरस्कार की स्थापना की थी। पुरस्कार के अंतर्गत जैन साहित्य, संस्कृति या समाज की सेवा करने वाले व्यक्ति/संस्था को प्रतिवर्ष 1,00,000/- रु. की राशि एवं रजत प्रशस्ति पत्र, शाल, श्रीफल से सम्मानित करने का निश्चय किया गया।

विधिपूर्वक गठित निर्णायक मंडल की सर्वसम्मत अनुशंसा के आधार पर प्रथम पुरस्कार अनुपलब्ध जैन साहित्य के उत्कृष्ट प्रकाशन कार्य हेतु भारतीय ज्ञानपीठ नई दिल्ली को देने का निश्चय किया गया। मई 2001 में की गई घोषणा के अनुरूप यह पुरस्कार चिन्मय मिशन आडिटोरियम-नई दिल्ली में 6 जनवरी 2002 को पूज्य उपाध्याय श्री ज्ञानसागर जी महाराज के ससंघ मंगल सान्निध्य में भव्यतापूर्वक बुद्धिजीवियों, समाजसेवियों एवं जैन विद्या के अध्येताओं की उपस्थिति में समर्पित किया गया। कार्यक्रम के मुख्य अतिथि केन्द्रीय कृषि मंत्री श्री अजित सिंह जी एवं प्रमुख अतिथि प्रख्यात विधिवेत्ता सांसद श्री लक्ष्मीमल सिंघवी थे। अध्यक्षता की भारतवर्षीय दि. जैन महासभा के यशस्वी अध्यक्ष श्री निर्मल कुमार जी जैन सेठी ने।

पूज्य उपाध्याय श्री ने अपने आशीर्वचन में संस्थान के कार्यकर्ताओं को शुभाशीष देते हुए कहा कि हम विद्वानों का सम्मान करें तथा उन संस्थाओं का भी सम्मान करें, जिन्होंने प्राचीन हस्तलिखित ग्रंथों को जनसुलभ कराया एवं स्वाध्याय की परम्परा को भी परिपुष्ट किया। आपने जैन साहित्य के संरक्षण एवं संवर्द्धन हेतु ज्ञानपीठ को एवं इस प्रशस्त निर्णय हेतु संस्थान के कार्यकर्ताओं को अपना आशीर्वाद प्रदान किया।

डॉ. अनुपम जैन
पुरस्कार संयोजक

'जिनभाषित' के सम्बन्ध में तथ्यविषयक घोषणा

प्रकाशन-स्थान	:	1/205, प्रोफेसर्स कालोनी, आगरा-282 002 (उ.प्र.)
प्रकाशन-अवधि	:	मासिक
मुद्रक-प्रकाशक	:	रतनलाल बैनाड़ा
राष्ट्रीयता	:	भारतीय
पता	:	1/205, प्रोफेसर्स कालोनी, आगरा- 282002 (उ.प्र.)
सम्पादक	:	प्रो. रतनचन्द्र जैन
पता	:	137, आराधना नगर, भोपाल -462003 (म.प्र.)
स्वामित्व	:	सर्वोदय जैन विद्यापीठ 1/205, प्रोफेसर्स कालोनी, आगरा-282002 (उ.प्र.)

मैं, रतनलाल बैनाड़ा एतद् द्वारा घोषित करता हूँ कि मेरी अधिकतम जानकारी एवं विश्वास के अनुसार उपर्युक्त विवरण सत्य है।

रतनलाल बैनाड़ा
15.2.2002 **प्रकाशक**

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

एक अहसास था

मुनि श्री क्षमासागर

जहाँ तरलता थी
मैं डूबता चला गया,
जहाँ सरलता थी
मैं झुकता चला गया,
संवेदनाओं ने
मुझे जहाँ से छुआ
मैं वहीं से
पिघलता चला गया।
सोचने को
कोई चाहे
जो सोचे,
पर यह तो एक
अहसास था
जो कभी हुआ
कभी न हुआ।

प्रतियोगिता

मैं उसी दिन
समझ गया था
जब मैंने
ईश्वर होना चाहा था,
कि अब
कोई जरूर
ईश्वर से
बड़ा होना चाहेगा।
और अब सब
ईश्वर से बड़े हो गये हैं,
कोई
ईश्वर नहीं है।

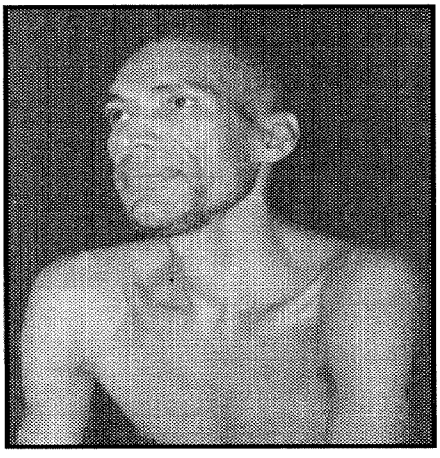

नमोऽस्तु

मंदिर में मुनियों को वंदना करते देखकर

सरोज कुमार

आज मैंने
महामंत्र णमोकार की
एक पंक्ति को
दूसरी पंक्ति की साक्षात वंदना करते देखा!
अरिहंत प्रसन्न मुद्रा में
मूर्तियों में मग्न थे,
साधुगण साधना की
प्रतिपूर्ति में नग्न थे!

भक्तगण परमानन्दित
भव्य दृश्य के
आस्वादन में संलग्न थे!
अरिहंतों में सिद्धि का
प्रदीप्त आभा मण्डल था,
साधु संग पाथेय रूप
पिच्छी थी, कमंडल था!
कविता की दो पंक्तियाँ
एक दूसरी को संदर्भ देकर
समृद्ध कर रही थीं!
भक्ति और सिद्धि के रंग
आपस में मिलकर, रंगारंग
इंद्रधनुष बन गये थे!

सरोवर ने अपनी नीली आँखों से देखा
कमल की एक पंखुरी
दूसरी में खुल रही थी,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

भाग्योदय तीर्थ का
अहिंसा के क्षेत्र में महान प्रयास

व्यक्ति के जीवन में स्वास्थ्य का विषय सबसे महत्त्वपूर्ण होता है, क्योंकि आत्मा का सबसे नजदीकी मित्र यदि कोई है तो वह है शरीर। शरीर में होने वाली बीमारियों से व्यक्ति का चित्त व्याकुल होता है और उस समय साधना के क्षेत्र में व्यक्ति विचलित हो उठता है। भगवान महावीर के मूल सिद्धान्त `अहिंसा परमोधर्मः' को जन-जन तक पहुँचाने के लिए भाग्योदय तीर्थ द्वारा स्वास्थ्य संबंधी कार्यक्रम में जो अहिंसा की भागीदारी रखी गई है, वह अपने आप में महत्त्वपूर्ण है, क्योंकि स्थूल रूप से तो व्यक्ति अपने जीवन में हिंसा से बचता है, लेकिन जब पापकर्म के उदय से शरीर में विकृतियाँ पैदा होती हैं, शरीर को बीमारियाँ घेर लेती हैं, तब भेद-विज्ञान की नीव मजबूत न होने से एवं मेडीसिन विज्ञान की चकाचौंधमय भ्रामक जानकारियों में आकर व्यक्ति ऐसी दवाईयाँ ले लेता है, जो हिंसात्मक तरीको से बनी होती हैं। प्राकृतिक चिकित्सा पूर्णतः अहिंसात्मक है। इसमें बिना किसी दवाई के, मात्र मिट्टी-पानी, धूप, हवा योग, ध्यान एवं शुद्ध शाकाहारी आहार के माध्यम से उपचार किया जाता है। पिछले 3 वर्षों से भाग्योदय तीर्थ सागर में 50 बिस्तरों का प्राकृतिक चिकित्सालय सुचारू रूप से चल रहा है, जिसमें 12 ब्रह्मचारिणी डॉक्टर पूज्य आचार्य श्री विद्यासागर जी महाराज से व्रत लेकर निःशुल्क अवैतनिक सेवाएँ दे रही हैं, जहाँ छने हुए जल से उपचार एवं आहर दिया जाता है। इतना ही नहीं इस प्राकृतिक चिकित्सा को जन-जन तक पहुँचाने के लिए साधु संतो के सान्निध्य में शिविर आयोजित कर 15-15 दिन तक रोगी को वहाँ रखकर स्वस्थ किया जाता है। पिछले 2 वर्षों में 4 कैम्प लगाये गए। इसी तारतम्य में कुछ हर्बल सामग्री जो दैनिक जीवन में उपयोगी है, जैसे चाय, शुद्ध मंजन, दर्द नाशक तेल, डायबिटीज चूर्ण, शैम्पू, साबुन आदि भी तैयार कर व्यक्ति को हिंसामुक्त करने का प्रयास जारी है।

वे सभी रोगी जो दवाइयाँ खाते-खाते परेशान और निराश हो चुके हैं और जो व्रतधारी दवाइयों का सेवन नहीं करना चाहते, वे मनोहारी 1008 श्री चन्द्रप्रभु भगवान की छत्रछाया में रहकर प्राकृतिक चिकित्सा से लाभ प्राप्त कर सकते हैं। यहाँ रहने-खाने एवं उपचार की उत्तम व्यवस्था है। भाग्योदय तीर्थ में 108 बिस्तर की ऐलोपैथी, विशाल आयुर्वेद रसायन शाला, विकलांग केन्द्र एवं विशाल पैथालॉजी लैब की सुविधा भी उपलब्ध है।

डॉ. रेखा जैन
भाग्योदय तीर्थ प्राकृतिक चिकित्सालय, सागर
(म.प्र.)470001

स्वामी, प्रकाशक एवं मुद्रक : रतनलाल बैनाड़ा द्वारा एकलव्य ऑफसेट सहकारी मुद्रणालय संस्था मर्यादित, जोन-1, महाराणा प्रताप नगर, भोपाल (म.प्र.) से मुद्रित एवं सर्वोदय जैन विद्यापीठ 1/205, प्रोफेसर्स कालोनी, आगरा-282002 (उ.प्र.) से प्रकाशित।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org